इकाई 4
विश्व में राष्ट्रवाद का विकास

कोलम्बस से पूर्व अमेरिका के मूल निवासी

नई दुनिया के नाम से प्रसि़द्ध अमेरिका महाद्वीप का इतिहास क्रिस्टोफर कोलम्बस की 1492 ई. की खोज यात्रा के साथ प्रारम्भ हुआ माना जाता है। यूरोपीय इतिहाकार एक लम्बे अरसे से विश्व के इस शक्तिशाली देश का कोलम्बस से पूर्व का इतिहास छिपाते रहे हैं। अमेरिका के मूलनिवासी जिन्हें यूरोपीय इतिहासकारों ने "रेड इंडियन्स" के नाम से सम्बोधित किया है, हजारों सालों तक नस्ली भेदभाव से ग्रसित रहे।

1492 ई. से पूर्व अमेरिका का इतिहास विश्व के समक्ष नहीं रखना एवं वहीं से इतिहास की शुरूआत करना यूरोपियन देशों की उसी नीति के संगत है जो उन्होंने औपनिवेशिकवाद की भावना से प्रेरित होकर आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका, न्यूजीलैण्ड, इण्डोनेशिया, चीन तथा भारत के साथ–साथ अन्य राष्ट्रों में अपनायी।

अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम के अध्ययन से पूर्व इतिहास के छात्रों को अमेरिका के मूल निवासी एवं उनकी सभ्यता, संस्कृति को जानना अतिआवश्यक है ताकि उस संघर्ष को उचित सम्मान दिया जा सके।

मूल निवासियों की प्राचीन सभ्यताएँ

उत्तरी अमेरिका को माया एवं एजटेक सभ्यता और बहामा द्वीप समूह को अरावाक जनजाति तथा दक्षिणी अमेरिका को इंका संस्कृति के लिए जाना जाता है। अमेरिकी मूल संस्कृति के बारे में हमें उस काल के यात्रियों द्वारा लिखित यात्रा वृतान्तों, रोजनामचों, डायरियों एवं भव्य वास्तुकला के अवशेषों से पता चलता है। ये सभी सभ्यताएँ शहरी या नगरीय सभ्यताएँ थी अमेरिका में आजीविका का मूल आधार कृषि और उनसे जुड़े व्यवसाय ही थे। वे लोग मक्का, आलू, कसावा व कपास पैदा करते थे। भारतीय समाज के समान यहाँ भी प्रकृति व पर्यावरण को उनके सामाजिक व धार्मिक कार्यों में उचित प्रतिनिधित्व दिया जाता था।

चित्र–4.1 : अमेरिकी मूल निवासियोंकी प्राचीन सम्यताएँ

माया सभ्यता एवं संस्कृति :–

मेक्सिको की माया संस्कृति व सभ्यता का आधार मक्के की खेती से जुड़ा हुआ था। समस्त त्योंहार, उत्सव अन्य धार्मिक क्रियाकलाप मक्का बोने, उगाने व काटने से उसी तरह जुड़े हुए थे जैसे भारत की होली, लोहड़ी, मकर संक्रांति आदि धार्मिक उत्सव फसल बुवाई व कटाई से जुड़े थे।

एजटेक सभ्यता एवं संस्कृति :–

मेक्सिको में एक और श्रेणीबद्धसमुदाय एजटेक समुदाय था जिसमें पुरोहित व अभिजात वर्ग शामिल थे। इन समुदायों में श्रेणी के अनुसार कार्यों का विभाजन था तथा कार्यों के अनुसार सम्मान दिया जाता था। योद्धा, पुरोहित, अभिजात वर्ग एवं व्यापारियों का उचित सम्मान था। राजा सर्वोच्च सत्ता

चित्र–4.2 : माया सम्यता के प्राचीन अवशेष

का प्रमुख था। सूर्य को आराध्य देव मानकर पूजा जाता था। एजटेक समुदाय समस्त भूमि को सामूहिक स्वामित्व के सिद्धान्त के तहत मानता था, क्योंकि यह समुदाय प्रकृति के अत्यन्त निकट था। एजटेक समुदाय का प्रमुख देवता मेक्सिवली था। जिनके नाम पर मेक्सिको का नामकरण हुआ। एजटेक समुदाय शिक्षा के प्रति जाग्रत था। यहाँ के छात्रों को सेना व धर्माधिकारी बनने की शिक्षा दी जाती थी। ये समाज केन्द्रीयकृत शहरी संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते थे। यहां के भव्य अवशेष मूल निवासियों की याद दिलाते हैं तथा मंदिरों में परम्परागत रूप से सोने चांदी का प्रयोग किया जाता था।

चित्र–4.3 : एजटेक सभ्यता के भग्नावेश

यूरोपीय देशों के अमेरिका पहुँचने के कारण

क्रिस्टोफर कोलम्बस द्वारा की गई अमेरिका के समुद्री मार्ग की खोज ने यूरोपियन देशों को यहाँ पहुँचने, बसने, व्यापार करने का अवसर प्रदान किया। अमेरिका का नामकरण अमेरिगो वेस्पुची नाम इटालियन नाविक के नाम पर हुआ था। यहाँ के निवासियों को रेड इण्डियन्स कहा गया। वास्तव में क्रिस्टोफर कोलम्बस भारत के समुद्री मार्ग की खोज में निकला था। उसने अमेरिका को ही भूलवश भारत मान लिया। इसी कारण यहाँ के मूल निवासियों को "रेड इण्डियन्स" के नाम से सम्बोधित किया गया। यूरोपवासियों के अमेरिका पहुँचने के कई कारण थे, लेकिन इनमें मुख्यतः तीन कारणों से प्रेरित होकर ही वे यहाँ पहुँचे थे। उनकी उस भावना को संक्षेप में थ्रीजी (3G) के रूप में व्यक्त किया जाता है–

1. गोल्ड– से तात्पर्य था स्थायी धातु अर्थात् सोना, चांदी व अन्य मूल्यवान धातुएँ, जिनका अर्जन करना ही यूरोप वासियों का मुख्य उद्देश्य था।

2. ग्लोरी– अर्थात् विस्तारवाद की भावना से ओतप्रोत हो अन्य देशों पर अधिकार कर उपनिवेश बसाना व क्षेत्राधिकार बढ़ाना, अपना गौरव समझते थे।

3. गॉड– अर्थात् ईसाइयत का विश्व के समस्त देशों में प्रचार–प्रसार। यूरोपीय देशों के व्यापारियों, अभिजात वर्गों, जमींदारों, धनाढ्य व्यक्तियों एवं ईसाई मिशनरियों द्वारा नए मार्गों की खोज को प्रोत्साहन दिया गया। कुछ देशों जैसे पुर्तगाल व स्पेन के राजकुमारों व राजाओं द्वारा इन समस्त अभियानों का खर्चा तक उठाया गया।

यूरोपीय देशों से लोगों के अमेरिका पहुँचने के कारण इस प्रकार हैं :–

1. पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति का प्रचार–प्रसार

बाहरी दुनिया के लोगों को ईसाई बनाने की सम्भावना ने यूरोप के देशों को समुद्र में उतरने को प्रेरित किया। स्पेन व पुर्तगाल पर इन विचारधाराओं का अत्यधिक प्रभाव था। ईसाइयत के प्रचार ने केपिटुलैसियोन नामक इकरारनामों की शुरूआत की जिसमें पोप ने खोजने या जीतने वाले इलाके को पुरस्कार स्वरूप उन्हें ही सौंपने का वादा किया जिन्होंने उसे खोजा या विजित किया था।

2. स्थायी धातु व मसालों की खोज

1453 ईस्वी में तुर्कों द्वारा कुस्तुन्तुनिया की विजय ने यूरोपीय व्यापार को मंदा कर दिया था तथा उन्हें अधिक कर देना पड़ता था। साथ ही यूरोपीय देशों में सोने व चांदी की कमी होती जा रही थी। स्थायी धातु का संग्रह गौरव का प्रतीक माना जाता था। अधिक से अधिक सोने का संग्रह उनको समुद्री यात्रा कर भारत के नए मार्गो की खोज को प्रेरित कर रहा था। ठण्डे प्रदेश होने के कारण गर्म मसालों की प्राप्ति दूसरा महत्त्वपूर्ण कारण था जो भारत व अन्य उष्णकटिबंधी प्रदेशों में ही प्राप्त हो सकते थे।

3. राजनैतिक अधिकारों के लाभ प्राप्ति की आकांक्षा

यूरोपीय राज्यों में सत्ता राजनैतिक रूप से लार्ड, अभिजात एवं पादरी वर्गों के हाथों में थी। दूसरा वर्ग अर्थात् मध्यम समुदाय राजनैतिक लाभों व अधिकारों से वंचित था। वे अपने देश की राजव्यवस्था से दुखी होकर अमेरिका पहुँचने का प्रयास कर रहे थे। जहाँ रहकर वे स्वयं की सत्ता स्थापित कर सकें।

4. विस्तारवाद एवं औपनिवेशिक भावना :–

अधिक से अधिक देशों पर अधिकार कर उन्हें

उपनिवेश बनाना राष्ट्रीयता का प्रतीक माना जाने लगा। यह यूरोपीय देशों के मध्य सम्मान का प्रतीक था। नगरों के अभ्युदय व औद्योगिकीकरण की भावना ने औपनिवेशीकरण की प्रक्रिया को तेज कर दिया। कृषि सम्बन्धी कच्चे उत्पाद की आवश्यकता उश्णकटिबंधीय राज्यों में ही पूरी हो सकती थी। वो जानते थे कि यूरोपीय देश अधिक गर्म जलवायु वाले स्थानों पर उपनिवेश स्थापित कर राजनीतिक नियन्त्रण स्थापित कर पाये तो उन्हें अधिक लाभ प्राप्त होगा। यह उपनिवेश कच्चे माल की प्राप्ति व तैयार माल बेचने की मण्डी बन सकते थे। यही कारण था कि भारत के बदले संयोगवश अमेरिका के मार्ग की खोज हो गई।

5.चर्च के अत्याचार :–

चर्च के अत्याचारों और मजहबी उत्पीड़न ने यूरोपीय लोगों को बाहरी देशों में बसने को प्रेरित किया। अमेरिका में मेसाचुसेट्स उपनिवेश के समीप प्लीमथ उपनिवेश की स्थापना करने वाले अंग्रेज मजहबी स्वतंत्रता की आकांक्षा में ही यहाँ पहुँचे थे।

6.जन संहारक युद्ध :–

कुछ लोग यूरोपीय देशों के मध्य होने वाले निरन्तर जन संहारक युद्धों से परेशान थे। इनसे बचने के लिए ये लोग एक सुरक्षित स्थान की तलाश में थे। इग्लैण्ड व फ्रांस में यूरोप की राजनीति का केन्द्र बनने की होड़ में संघर्ष की स्थिति बनी रहती थी।

7.जनसंख्या वृद्धि व अपराधियों को बसाने की समस्या :–

उस समय यूरोप में दासों का विक्रय होता था। उन्हें युद्ध में लड़ने हेतु बेचा जाता था। उससे बचने के लिये वे अपना देश छोड़कर अमेरिका जाने लगे। जेल में बंद कैदियों को भी अमेरिका में स्वतंत्र जीवन जीने का विकल्प दिया जाता था। यूरोपीय देशों में लगातार जनसंख्या में वृद्धि होती जा रही थी, साथ ही अपराधियों की संख्या भी बढ़ती जा रही थी। अतः बढ़ती जनसंख्या और अपराधियों के लिए एक नई भूमि की तलाश करना अनिवार्य था, जिससे इस समस्या के हल के साथ – साथ उनके आर्थिक उद्देश्यों की पूर्ति भी हो जाती। उस काल में देश निकाला नामक सजा का प्रावधान था। अतः इस कानूनी प्रावधान के कारण भी कई लोग अमेरिका आये।

8. भूगोल का नवीन ज्ञान

टालेमी द्वारा लिखित पुस्तक ''ज्योग्राफी'' लोगों के भौगोलिक ज्ञान वृद्धि में मील का पत्थर साबित हुई। उसने प्रथम बार यूरोप को बताया कि दुनिया गोल है। इस रोमांच ने साहसिक नाविकों को समुदी यात्रा के लिए प्रेरित किया।

यूरोपीय देशों से लोगों के आगमन का अमेरिकी मूल निवासियों पर प्रभाव :–

कोलम्बस द्वारा शुरू की गई सम्पर्क यात्रा से अमेरिका में गहरा सांस्कृतिक परिवर्तन आया। आक्रमणकारियों का अमेरिका में प्रवेश मूलनिवासियों के लिए हानिकारक सिद्ध हुआ। बाह्य आक्रमण ने उनकी संस्कृति, खान–पान, रहन–सहन, आचार–विचार, धार्मिक सोच इत्यादि को पूर्णतः समाप्त कर दिया। यूरोपीय देशों के लोग अपने साथ बीमारियाँ लेकर आए जिसका मूलनिवासियों की जनसंख्या पर घातक प्रहार पड़ा। चेचक, इन्फ्लूएंजा, ब्यूबोनिक प्लेग ने अमेरिकी मूल निवासियों की जनसंख्या का ह्रास किया। जनसंख्या ह्रास में रोगों के साथ–साथ युद्ध और विस्थापन ने मूल निवासियों को अल्पसंख्यक बना दिया। यूरोपीय लोगों द्वारा मूल निवासियों को गोरी बस्तियों से दूर कर दिया गया। उन्हें निर्वासित कर विशेष क्षेत्रों में प्रवेश देने से रोका गया। विस्थापन के माध्यम से उन्हें जबरन नए क्षेत्रों में ले जाया गया। उन्हें एक छोटे से हिस्से में रहने पर मजबूर किया गया।

चित्र–4.4 : कोलम्बस की अमेरिका यात्रा

अमेरिकी स्वतन्त्रता संघर्ष :–

अमेरिका में स्वाधीनता प्राप्त करने की घटनाओं को कुछ इतिहासकार स्वतन्त्रता संग्राम तथा कुछ क्रान्ति कह कर सम्बोधित करते हैं। कुछ विचारकों की राय में अमेरिका के स्वतंत्रता संघर्ष की प्रकृति विश्व के अन्य स्वातंत्र्य संघर्षो से भिन्न थी। यह संघर्ष किसी सामंतीय व्यवस्था, विदेशी सत्ता या निर्धनता एवं आर्थिक शोषण के विरुद्ध संघर्ष नहीं था बल्कि मनुष्य के स्वतंत्रता के स्वाभाविक प्राकृतिक अधिकार हेतु लड़ा गया था। अन्य इतिहासकारों की राय में यह संग्राम या क्रान्ति नहीं बल्कि एक गृह युद्ध या आपसी संघर्ष था, जो इग्लैण्ड के अमेरिकी उपनिवेश के निवासियों द्वारा स्वयं के मातृ देश के विरूद्ध लड़ा गया। उपनिवेश के गोरे निवासी प्रारम्भ में स्वतन्त्र

होने का प्रयास नहीं कर रहे थे बल्कि वे व्यापार के लाभों पर अपना हक जताना चाह रहे थे। ये युद्ध उन लोगों के मध्य लड़ा गया जिसके दोनों ही दल व्यापारिक – वाणिज्यवाद की भावना से प्रेरित थे। दोनों पक्षों का कल्चर, रिलीजन, खान–पान, सभ्यता, आचार विचार, भाषा, रंग रूप इत्यादि एक ही थे। इस संघर्ष में व्यापारी व मध्यम वर्ग ने ही भाग लिया था। संघर्ष के पश्चात् बनने वाली संविधान परिषद् में अंग्रेज व्यापारिक वर्ग का ही योगदान रहा। अमेरिकी मूलनिवासियों अर्थात "रेड इंडियन्स" को उनके ही देश में भविष्य निर्माण व देश हित में योगदान से वंचित रखा गया था। प्रारम्भिक संविधान के अन्तर्गत जनसाधारण को मताधिकार से वंचित रखा गया। इस संविधान में स्त्रियों, नीग्रो आदि को भी नागरिक अधिकारों से वंचित रखा गया। कार्ल एल. बेकर के अनुसार यह क्रान्ति उपनिवेशों व ब्रिटेन के मध्य आर्थिक हितों का संघर्ष था।

अमेरिकी संघर्ष के कारणः–

1.मातृ देश इग्लैण्ड के प्रति सहानुभूति की कमी

. अमेरिका में बसने वाले अंग्रेज मजहबी अत्याचारों, आर्थिक शोषण, राजनीतिक अधिकारों से वंचित होने के कारण यहाँ बसने आये थे। इन्हें इग्लैण्ड के चर्च व राजा से कोई सहानुभूति नहीं थी। साथ ही यहाँ बसने वालों में इग्लैण्ड के अपराधियों को भी अवसर दिया गया था। अतः उनमें व उनके वंशजों में मातृदेश के प्रति कोई सहानुभूति नहीं थी। इतिहासकार ट्रेवेलियन ने उन्हें सरल स्वभाव वाला अमेरिकी बताया है।

2.बौद्धिक जाग्रति

किसी भी संघर्ष में अधिकाधिक व्यक्तियों को जोड़ने में बौद्विक जाग्रति का योगदान रहता है। अमेरिकी संघर्ष में भी यह दिखाई देता है। टॉमस पेन ने अपनी पुस्तक "कॉमनसेंस" में देशप्रेम की भावना जगाने का प्रयास किया। उसका कहना था कि एक द्वीप, महाद्वीप पर शासन नहीं कर सकता है। बेंजामिन फ्रेंकलिन द्वारा अमेरिकन फिलोसोफिकल सोसाइटी की स्थापना की गयी थी, जहाँ नये–नये विचारों का आदान प्रदान व विचार गोष्ठियों का आयोजन किया जाता था। 1636 ई. में केम्ब्रिज नगर में हारवर्ड कॉलेज, 1639 ई. में वर्जीनिया में विलियम एंड मेरी कॉलेज शिक्षा के प्रमुख केन्द्र बने। पेनसिलवेनिया में क्वेकर समुदाय द्वारा शिक्षण संस्थाएँ स्थापित की गई। बौद्धिक चेतना के विकास में जेम्स ओटिस, पैट्रिक हेनरी तथा सेम्युअल एडम्स का काफी योगदान रहा। शिक्षा एवं पत्रकारिता ने भी बौद्धिक चेतना में महत्वूर्ण भूमिका निभाई। 1636 ई. में हारवर्ड कॉलेज की स्थापना हुई तो 1704 ई. में बोस्टन में पहला समाचार पत्र बोस्टन न्यूजलेटर प्रकाशित हुआ। 1765 ई. तक समाचार पत्रों की संख्या 25 तक पहुंच गई। शिक्षा एवं समाचार पत्रों का जाग्रति में विशेष योगदान रहा।

3.गवर्नर व स्थानीय विधान परिषद् में तनाव

उपनिवेशों की शासन व्यवस्था गवर्नर और उसकी कार्यकारिणी द्वारा संचालित होती थी। ये दोनों सम्राट के प्रति उत्तरदायी थे। लेकिन स्थानीय गोरे लोगों की विधान परिषद् इनके हस्तक्षेप को उचित नहीं मानती थी। अतः ये विधान परिषद् में गवर्नर और उनके पक्षधर जजों के वेतन–भत्तों की वृद्धि के विधेयक पर रोक लगा दिया करते थे। इससे शासकों व शासितों में तनाव बना रहता था।

4.सप्तवर्षीय युद्ध (1757–1763 ईस्वी) का प्रभाव :–

सप्तवर्षीय युद्ध इग्लैण्ड व फ्रांस के मध्य लड़ा गया था। इसमें इग्लैण्ड को निर्णायक विजय प्राप्त हुई। अमेरिका में फ्रांसिसी सत्ता का अन्त हो गया। अमेरिका स्थित सभी फ्रांसिसी उपनिवेश इग्लैण्ड के अधिकार क्षेत्र में आ गए। इस युद्ध ने औपनिवेशिक सैनिकों को उनकी शक्ति का एहसास करा दिया। यहाँ के निवासियों को अनुभव हो गया कि ब्रिटिश औपनिवेशक शासन के साथ चिपके रहने में अब कोई फायदा नहीं है। इस कारण इनमें धीरे–धीरे तनाव बढ़ता गया।

सप्तवर्षीय युद्ध में फ्रांस की पराजय से जो उत्तरी अमेरिका के क्षेत्र इग्लैण्ड के पास आए उनमें फ्रैंच कैथोलिक और मूलनिवासी रेड–इण्डियन की संख्या ज्यादा थी। रेड–इण्डियनों और इग्लैण्डवासियों में शुरू से ही तनाव की स्थिति बनी हुई थी। अतः इग्लैण्ड द्वारा उन्हें कुछ आरक्षित क्षेत्र दे दिया गया। इससे उपनिवेशों का प्रसार रूक गया।

5.उपनिवेशों का खुला वातावरण –

अमेरिकी उपनिवेशों में खुले वातावरण के कारण नागरिकों में जनतंत्र व स्वतंत्रता के प्रति अधिक झुकाव था। ये लोग जन – सहमति से कानून निर्माण के पक्षधर थे। जैसा कि मैरीलैण्ड तथा पेनसिलवेनिया के अधिकार पत्रों को देखने से स्पष्ट होता है। इग्लैण्ड के राजा ने भी उनके इन विचारों पर प्रारम्भ में रोक लगाने की कोशिश नहीं की और अमेरिका में स्वशासन की पनपती भावना को अप्रत्यक्ष मान्यता दे दी। यह मान्यता वित्तीय मामलों में बलवती होती चली गयी। इसी कारण जब अंग्रेज सरकार ने उपनिवेशों पर कर लगाकर उनके व्यापार को नियन्त्रित करने का प्रयास किया तो अमेरिका निवासी इसके विरोध में उठ खड़े हुए।

6. इग्लैण्ड का प्रारम्भ में नगण्य हस्तक्षेप– अमेरिकी उपनिवेशों में पनप रहे स्वशासन पर इग्लैण्ड ने अंकुश / रोक लगाने का

कभी भी प्रयास नहीं किया था। व्यवहार में ये उपनिवेश स्वतंत्रता का ही अनुभव कर रहे थे। इग्लैण्ड इन उपनिवेशों से कच्चा माल प्राप्त करने के अतिरिक्त और कोई आशा भी नहीं रख रहा था। इसी कारण उसने शायद ही कभी अमेरिकी उपनिवेशों के प्रशासन या उनके जीवन में हस्तक्षेप किया था। इग्लैण्ड में भी राजतंत्र व संसद में अधिकारों को लेकर संघर्ष चल रहा था। इस कारण भी इग्लैण्ड अपने उपनिवेशों के सम्बन्ध में ज्यादा कुछ विचार नहीं कर पाया और जब करना चाहा तो ये उपनिवेश इतने विकसित हो चुके थे कि इन्हें नियंत्रित कर पाना मुश्किल हो गया। अमेरिकी महाद्वीप एवं उसके प्रशान्त महासागर की विशालता इतनी थी कि इग्लैण्ड अपने बनाये कानूनों जैसे "नेवीगेशन" को कठोरता से लागू नहीं कर सकता था।

7. ब्रिटिश संसद व अमेरिकी उपनिवेशों में सैद्धांतिक मतभेद–

वाणिज्यवाद की भावना से प्रेरित इग्लैण्ड इस रूढ़िवादी विचारधारा पर काम कर रहा था कि उसकी संसद सर्वोच्च है, उसकी शक्तियों पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है और वह उपनिवेशों की शक्ति को सीमित करने का अधिकार रखती है। दूसरी ओर अमेरिकी उपनिवेशवासी अपना सम्बन्ध सम्राट से मानते थे ना कि इंग्लैण्ड की संसद से। उनका कहना था कि समुद्र पार उपनिवेश की स्थापना इग्लैण्ड के सम्राट ने की है न कि इग्लैण्ड की संसद ने। अतः इग्लैण्ड की संसद बिना अमेरिकी प्रतिनिधित्व के कर लगाने का अधिकार नहीं रखती है। यदि आवश्यक हो तो सम्राट धन की मांग उपनिवेश से अनुदान के रूप में कर सकता है। इस प्रकार इंग्लैण्ड की संसद जहाँ कर लगाना अपना अधिकार समझती थी वहीं उपनिवेशवासी इसे किसी भी कीमत पर मानने को तैयार नहीं थे।

जार्ज तृतीय के सम्राट और ग्रेनविले के प्रधानमंत्री बनने पर इंग्लैण्ड को यह अहसास हुआ कि उपनिवेश तो मातृदेश के लाभ हेतु होने चाहिए लेकिन अमेरिका में इसके उलट इंग्लैण्ड को खर्च करना पड़ रहा है। अतः उन्होंने तय किया कि अमेरिकी उपनिवेशों से शासन व्यय के साथ–साथ संरक्षण व्यय भी वसूला जाना चाहिए। इस सम्बंध में उन्होंने अधिनियम लागू कर दिये जिनका अमेरिकी अंग्रेजों द्वारा अत्यधिक विरोध किया गया।

8.सम्राट जॉर्ज तृतीय की गलत आर्थिक नीतियां व अधिनियम :–

(i) शुगर एक्ट 1764 ईस्वी – अमेरिका में विदेशी शराब का आयात बंद कर शीरे (चीनी उद्योग का उप उत्पाद जो एल्कोहल बनाने के काम आता है) पर कर लगा दिया गया तथा सीमा शुल्क अधिकारियों को इसे कड़ाई से लागू करने का आदेश दिए गए। अमेरिकी व्यापारी शीरा या शक्कर आदि उत्पाद फ्रांस और डच उपनिवेशों से सस्ता खरीदते थे। उस पर आयात शुल्क भी नहीं देना पड़ता था। शीरा उत्पाद इंगलैण्ड की कम्पनी से खरीदने की बाध्यता के विरुद्ध अमेरिकी उपनिवेशों में आक्रोश हुआ।

(ii) करेन्सी एक्ट – इस अधिनियम के तहत् उपनिवेश में बनी कोई भी हुण्डी अब वैध नहीं थी।

(iii) क्वाटरिंग एक्ट (1765 ईस्वी) – शासकीय सैनिकों के निवास स्थान तथा खाद्य सामग्री का वहन उपनिवेशों के माध्यम से करना तय किया गया।

(iv) स्टाम्प एक्ट (1765 ईस्वी) – समस्त पत्र–पत्रिकाओं, पुस्तकों, लाइसेन्सों, पट्टों पर स्टाम्प लगाना अनिवार्य कर दिया गया। यद्यपि यह व्यय बहुत कम था लेकिन सर्वाधिक विरोध इसी अधिनियम का हुआ। "उपनिवेशों ने बिना प्रतिनिधित्व के कर नहीं" का नारा बुलन्द किया गया। अधिक विरोध होता देख इग्लैण्ड ने इस एक्ट को समाप्त कर दिया।

(v) चाय करः 1767 ईस्वी – इग्लैण्ड के वित्त मंत्री टाउनशैण्ड ने काँच, रंग, चाय पर आयात कर लगा दिया। इनसे होने वाली आय का उपयोग गवर्नर तथा उनकी कार्यकारिणी पर ही करना था।

अमेरिकी संघर्ष की प्रमुख घटनाएँ

न्यूयार्क विधानसभा का निलम्बन (बोस्टन हत्या काण्ड)

जून 1767 ई. में न्यूयार्क विधानसभा को इसलिए भंग कर दिया गया क्योंकि वो एक्ट के तहत अंग्रेज सैनिकों के रहने व खाने की व्यवस्था नहीं कर पाये। इस मुद्दे पर 5 मार्च 1770 ई. को अंग्रेज सैनिकों व नागरिकों में तनाव उत्पन्न हो गया। इस संघर्ष में तीन नागरिक मारे गये। इस हत्याकांड ने टाउनशेड करों को समाप्त करा दिया। इग्लैण्ड को झुकना पड़ा लेकिन चाय पर कर बनाए रखा गया।

बोस्टन टी पार्टी – 26 दिसम्बर 1773 ई. –

जिस ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने भारत को परतन्त्र बनाया था उस कम्पनी की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। अतः कम्पनी ने दिवाले से बचने के लिए अमेरिका में चाय बेचने का एकाधिकार मांगा। कम्पनी की मांग पर ब्रिटिश संसद ने अमेरिका में चाय बेचने का अधिकार ईस्ट इण्डिया कम्पनी को दे दिया। यह कम्पनी सामान्य दरों से कम पर चाय बेचने जा रही थी। जिससे अमेरिका का तस्करी व्यापार समाप्त हो जाता। जब

चाय की पेटियों से भरे जहाज बोस्टन बन्दरगाह पर पहुंचे तो दिसम्बर की रात में सैम्युअल एडम्स और उसके साथियों के निर्देश पर लगभग 50 अमेरिकी व्यक्तियों ने छद्म वेश में जहाज पर हमला कर चाय की पेटियों को समुद्र में फेंक दिया। इस घटना को 'बोस्टन टी पार्टी' के नाम से जाना जाता है। यह दुःसाहस जार्ज तृतीय जैसे शासक को स्वीकार नहीं था। उसने पूरे बोस्टन को सजा देने की ठान ली। ब्रिटिश संसद द्वारा पांच नियम बनाये गए।

चित्र–4.5 : बोस्टन टी पार्टी

1. बोस्टन बन्दरगाह को तब तक बन्द रखा जाएगा जब तक चाय का हर्जाना नहीं दे दिया जाता। इसका तात्पर्य बोस्टन की तबाही थी।
2. ब्रिटिश सैनिकों के ठहरने व खान–पान की पूर्ण व्यवस्था स्थानीय प्राधिकारियों पर डाल दी गई।
3. कैथोलिक मतावलम्बियों को उपासना सम्बन्धी स्वतंत्रता प्रदान कर दी गई।
4. हत्या एवं अन्य अपराधों की सुनवाई सम्बन्धी अधिकार इग्लैण्ड या अन्य उपनिवेशों में चलाने का निर्णय लिया गया।
5. मेसाचूसेट्स के सांसदों को चुनने का अधिकार राजा को दे दिया गया।

प्रथम महाद्वीपीय कांग्रेस –

इन कानूनों का विरोध करने के लिए 5 सितम्बर 1774 ई. को जार्जिया को छोड़ सभी उपनिवेशों ने सम्मेलन में भाग लिया। इस सम्मेलन का उद्देश्य उपनिवेशों की वर्तमान स्थिति पर विचार करना व अपनी मांगों को इग्लैण्ड से मनवाना था। इसमें मात्र अपने अधिकारों की मांग की गई थी तथा एक प्रतिनिधि मण्डल इग्लैण्ड भेजा गया। जॉर्ज वाशिंगटन, एडम्स, जार्ज जे आदि ने इस कांग्रेस में भाग लिया था।

लेक्सिंगटन हत्याकाण्ड –

19 अप्रेल 1775 ई. को जॉन हेनकॉक व सैमुएल एडम्स को गिरफ्तार कर लिया गया। इसके विरोध में स्वयंसेवकों की टुकड़ी ने ब्रिटिश सैनिकों पर हमला कर दिया। इस संघर्ष में 8 स्वयंसेवक मारे गये। इसका बदला लेने के लिए कनकार्ड नामक स्थान पर स्वयंसेवकों ने ब्रिटिश सैनिकों को मार दिया।

इग्लैण्ड के विरूद्ध संघर्ष

द्वितीय महाद्वीपीय कांग्रेस –

10 मई 1775 ई. को जान हेनकॉक की अध्यक्षता में द्वितीय महाद्वीपीय कांग्रेस का अधिवेशन फिलाडेल्फिया में किया गया। इंग्लैण्ड ने विद्रोह को सैनिक शक्ति से दबाना चाहा। प्रारम्भ में अंग्रेजी सेना का पलड़ा भारी रहा। अतः अमेरिकी नेताओं को विदेशी सहायता की आवश्यकता प्रतीत हुई। इसके लिए इंग्लैण्ड से संबंध तोड़ना आवश्यक था। अतः फिलाडेल्फिया में एकत्रित 13 ही उपनिवेश बस्तियों ने 15 जून को जॉर्ज वाशिंगटन को महाद्वीपीय सेना का सेनापति नियुक्त कर दिया।

स्वतंत्रता का घोषणा पत्र –

महाद्वीपीय कांग्रेस में रिचर्ड हेनरी ने अमेरिका की स्वतंत्रता का

चित्र–4.7 : अमेरिकी स्वतंत्रता घोषणा पत्र की तैयारी

प्रस्ताव रखा। जॉन एडम्स ने इसका अनुमोदन किया। पांच सदस्यों की समिति में जेफरसन, बैंजामिन फ्रेंकलिन, जॉन एडम्स, रोजर सर्मन और रॉबर्ट लिविंगस्टन सदस्य थे। 2 जुलाई, 1776 ई. को कांग्रेस ने स्वतंत्रता के प्रस्ताव को स्वीकृत किया और 4 जुलाई को अमेरिका को स्वतंत्र घोषित कर दिया। घोषणापत्र में कहा गया "हम उन तत्वों को स्वयं स्पष्ट समझते हैं कि जन्म से सभी मनुष्य समान हैं और सृष्टिकर्ता ने उन्हें अविच्छिन अधिकारों से विभूषित किया है, जिनमें प्रमुख हैं– जीवन, स्वाधीनता और सुख की खोज, इसलिये हम संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रतिनिधि उन समस्त जन्मजात अधिकारों की प्राप्ति कि लिये जो स्वाधीन देश के लोगों को प्राप्त होते है, स्वतंत्रता की घोषणा करते हैं।"

महत्वपूर्ण विजय

1. **ट्रेण्टन युद्ध** – 1776 ई. में वाशिंगटन ने ट्रेण्टन युद्ध में इंग्लैण्ड की सेना को हरा दिया।
2. **सारागोटा युद्ध** – 1777 ई. में हुये सारागोटा युद्ध में भी इग्लैण्ड को हार का मुंह देखना पड़ा।
3. **यार्कटाउन युद्ध 1781 ई.** – इस युद्ध में फ्रांसिसी सेना की सहायता से वाशिंगटन और रोशाम्बी ने इंग्लिश सेनानायक कार्नवालिस को आत्मसमर्पण करने को मजबूर कर दिया।

यद्यपि इस संघर्ष में अमेरिकी स्वयंसेवकों का योगदान अग्रणी था। लेकिन अन्य कारकों का सहयोग भी नहीं भुलाया जा सकता है। अंग्रेज सेना के जनरल 'हो' की सहानुभूति अमेरिकी स्वयंसेवकों के साथ थी। जनरल हो के पास कई अवसर आये थे जब वह इस संघर्ष को इग्लैण्ड के पक्ष में समाप्त करने की स्थिति में था। लेकिन उसने सक्रिय योगदान नहीं कर अमेरिकी स्वयंसेवकों की सेना को विजय प्राप्त करने दी।

सारागोटा के युद्ध में इग्लैण्ड की पराजय ने फ्रांस व स्पेन को अमेरिका के पक्ष में कर दिया। फ्रांस अपनी सप्तवर्षीय युद्ध में हुई हार का बदला लेना चाहता था। अतः इन देशों द्वारा बेंजामिन फ्रेंकलिन की अपील पर अमेरिका को युद्ध सामग्री उपलब्ध करवाई गई। साथ ही फ्रांस के लफायते जैसे प्रशिक्षित सेनानायक ने उन्हें अपनी सेवायें प्रदान की। फ्रांस, स्पेन व हॉलैण्ड द्वारा शक्तिशाली जंगी जहाजों का दल युद्ध के लिए अमेरिका के समर्थन में भेजा गया।

पेरिस की संधि – 3 दिसम्बर 1783 ई. को पेरिस की संधि पर इग्लैण्ड व अमेरिकी उपनिवेशों के प्रतिनिधियों के मध्य हस्ताक्षर हुए। इस संधि से अमेरिका के 13 उपनिवेशों को स्वतंत्र मान लिया गया। इस प्रकार अमेरिका एक स्वतंत्र देश के रूप में विश्व मानचित्र पर उभरा। यह एक युगान्तरकारी घटना थी, क्योंकि पहली बार विश्व में किसी उपनिवेश ने संघर्ष कर स्वतंत्रता प्राप्त की थी। अमेरिका में स्वतंत्रता दिवस 4 जुलाई को मनाया जाता है, क्योंकि 4 जुलाई 1776 ईस्वी को ही इग्लैण्ड से अलग होने के घोषणा पत्र को समस्त अमेरिकी राज्यों द्वारा स्वीकार किया गया था।

इंग्लैण्ड की पराजय के कारण :–

1. इंग्लैण्ड व अमेरिका के बीच हजारों किलोमीटर की दूरी थी, साथ ही अंग्रेज सैनिक यहाँ की भौगोलिक परिस्थिति से परिचित भी नहीं थे। दूसरी ओर स्पेन, फ्रांस व हॉलेण्ड के समुद्री बेड़े ने इग्लैण्ड को अतिआवश्यक युद्ध सामग्री पहुँचाने से समुद्र में ही रोके रखा।

2. इग्लैण्ड के सैनिक अपने स्वजातीय बन्धुओं से लड़ रहे थे। अतः इग्लैण्ड के सैनिकों में वो जोश नहीं था। उपनिवेशवासी सर्वस्व न्यौछावर कर संघर्ष को अपने पक्ष में करने को दृढ़ संकल्पित थे। वे जान व माल की सुरक्षा की अन्तिम लड़ाई लड़ रहे थे। चूंकि वे इग्लैण्ड के ही मूल निवासी थे इस कारण वे उन राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक अधिकारों से परिचित थे जिन्हें नागरिक अधिकारों की संज्ञा दी जाती थी और वे इन्हें हर कीमत पर पाने को तैयार थे।

3. इग्लैण्ड की सेना में अधिकांश सैनिक किराये पर जर्मनी से लिए गए थे। अतः उनमें विजय के प्रति विशेष रूचि नहीं थी। इस कारण वे राष्ट्रीयता से ओतप्रोत अमेरिकी स्वयंसेवकों के समक्ष नहीं टिक सके। इसके अलावा जनरल गेज ने उपनिवेशों की शक्ति और विरोध दोनों का गलत मूल्यांकन कर लिया था।

4. इंग्लैण्ड का राजा जॉर्ज व उसके मंत्री टाउनशेड, ग्रीनविले इत्यादि अयोग्य साबित हुए। उधर सर विलियम व हो जैसे जनरलों ने जानबूझकर विजय के अवसरों को खो दिया। इग्लैण्ड का युद्ध मंत्री लार्ड जर्मन तो कभी–कभी ही युद्ध स्थल से आये पत्रों या संदेशों को पढ़ता था। इनके विपरीत जॉर्ज वाशिंगटन योग्य सेनानायक सिद्ध हुआ।

अमेरिकी स्वतंत्रता के प्रभाव :–

1.लोकतांत्रिक राष्ट्र का उदय व लिखित संविधान :–

. पेरिस की संधि से एक शक्तिशाली लोकतांत्रिक राष्ट्र का उदय हुआ। 13 उपनिवेशों ने स्वयं को एक स्वतंत्र सम्प्रभु देश में बदल दिया। इस देश में लिखित संविधान के आधार पर राज्यों को आंतरिक स्वतंत्रता के साथ–साथ संघीय शासन व्यवस्था लागू की गई। नागरिकता की भावना, मताधिकार तथा समानता का सिद्धांत देश में स्वीकार किया गया। यद्यपि नीग्रो, मूलनिवासियों एवं महिलाओं के सम्बन्ध में

यह सिद्धान्त अक्षरतः सत्य नहीं था।

2. मजहबी स्वतंत्रता :–

शिक्षा को उपासना पद्धति से व उपासना पद्धति को राज्य से अलग कर व्यक्तिगत विषय बना दिया गया। प्रत्येक व्यक्ति को मजहबी स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया।

3. वाणिज्यवाद का अन्त :–

इस संघर्ष के बाद इग्लैण्ड और अमेरिका के व्यापारिक सम्बन्ध इस प्रकार सुधरे कि वाणिज्यवादी सिद्धांत का ही अन्त हो गया। इस सिद्धांत में आयात कम व ज्यादा निर्यात को महत्व दिया जाता था। मातृदेश व उपनिवेशों का सम्बन्ध कच्चा माल प्राप्त करने व तैयार माल बेचने तक ही सीमित था। मगर अमेरिका व इग्लैण्ड के मध्य बढ़ते व्यापार ने इग्लैण्ड को स्वयं इस नीति को त्यागने पर मजबूर कर दिया।

4. ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का उदय :–

अमेरिका की जीत ने अन्य औपनिवेशिक देशों को इग्लैण्ड के विरूद्ध लड़ने हेतु खड़ा कर दिया। इग्लैण्ड ने स्वयं उपनिवेशों के प्रति नीति बदलते हुए ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का निर्माण किया। इस संगठन के माध्यम से इग्लैण्ड ने औपनिवेशिक देशों की समस्याओं को जानने व समझने का मंच तैयार कर लिया, ताकि अमेरिकी संघर्ष जैसी घटनाओं की पुनरावृत्ति नहीं की जा सके। इग्लैण्ड के सम्राट/साम्राज्ञी के प्रति औपनिवेशिक देशों की शक्ति बनी रहे, इसका प्रयास इस संगठन के माध्यम से किया जाने लगा।

5. फ्रांसिसी क्रांति :–

इस संघर्ष ने फ्रांस की क्रांति को अवश्यम्भावी बना दिया। अमेरिकी संघर्ष में भाग लेना फ्रांस को भारी पड़ गया। फ्रांस की आर्थिक स्थिति खराब हो गयी। साथ ही उसे कोई लाभ भी नहीं मिला। फ्रांस के जिन सैनिकों ने इस संघर्ष में भाग लिया था, उनको राजनीतिक, मजहबी व सामाजिक अधिकारों का आभास हुआ। वे स्वयं फ्रांस में इन अधिकारों की मांग करने लगे।

6. आयरलैण्ड को लाभ :–

इस अमेरिकी संघर्ष की सफलता ने आयरलैण्ड को भी इग्लैण्ड के विरूद्ध उठ खड़ा होने का साहस दिया। आयरिश लोग स्वतंत्र आयरिश संसद की स्थापना और व्यापारिक प्रतिबन्धों का अन्त चाहते थे। इंग्लैण्ड ने भी आयरिश लोगों की मांगों पर सहानुभूति पूर्वक विचार कर वहाँ की संसद की व्यवस्थापिका को स्वतंत्र कर दिया।

7. संसद की शक्ति में बढ़ोतरी :–

इस संघर्ष में चूंकि इग्लैण्ड के सम्राट जॉर्ज तृतीय की अयोग्यता साबित हो गयी थी। अतः संसद ने प्रधानमंत्री लार्ड नार्थ व राजा जॉर्ज तृतीय को उत्तरदायी ठहराया परिणामस्वरूप राजा की शक्तियों को कम करते हुए संसद की शक्ति को पुनः स्थापित किया गया।

महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम

1492 ईस्वी	– क्रिस्टोफर कोलम्बस द्वारा अमेरिकी मार्ग की खोज
1607 ईस्वी	– जेम्स टाउन में अंग्रेजों की पहली बस्ती
1624 ईस्वी	– अमेरिकी बस्तियों पर इग्लैण्ड के नियंत्रण की शुरूआत, तम्बाकू के व्यापार पर नियंत्रण
1651 ईस्वी	– नेवीगेशन एक्ट लागू
1764 ईस्वी	– ग्रिनविले सरकार द्वारा शुगर एक्ट पारित
1765 ईस्वी	– ग्रिनविले सरकार द्वारा स्टाम्प एक्ट पारित
1766 ईस्वी	– राकिंघम (प्रधानमंत्री) द्वारा स्टाम्प एक्ट की समाप्ति
1767 ईस्वी	– टाउनशैड कर लागू (चाय, शीशा, कागज, रंग और सिक्का धातु)
5 मार्च 1770 ईस्वी	– बोस्टन हत्याकाण्ड
26 दिसम्बर 1773 ईस्वी	– बोस्टन टी पार्टी घटना
5 सितम्बर 1774 ईस्वी	– प्रथम महाद्वीपीय कांग्रेस
19 अप्रेल 1775 ईस्वी	– लेक्सिंगटन हत्याकाण्ड
10 मई 1775 ईस्वी	– द्वितीय महाद्वीपीय कांग्रेस
4 जुलाई 1776 ईस्वी	– अमेरिकी घोषणा पत्र
3 दिसम्बर 1783 ईस्वी	– पेरिस की संधि (अमेरिकी बस्तियों की स्वतंत्रता को मान्यता)

फ्रांस की राज्यक्रांति

विश्व में फ्रांस की राज्यक्रांति को एक युगान्तरकारी घटना माना जाता हैं। जब कभी पुरानी व्यवस्था के अनुरुप वर्तमान परिस्थिति में चलना कठिन हो जाता है तो शासन कर्ता व नीति निर्माताओं का दायित्व बनता है कि व्यवस्था में जन आकांक्षाओं के अनुरूप परिवर्तन करे। यदि शासक वर्ग इस परिस्थिति को समझने में असमर्थ होता है या जानबूझकर व्यवस्था परिवर्तन से इन्कार करता है तो वैसी ही स्थितियों का जन्म होता है जैसा फ्रांस की क्रांति की पृष्ठभूमि में दिखाई देता है। वैसे फ्रांस की क्रांति राजनैतिक व्यवस्था के विरूद्ध कम थी उसमें सामाजिक असंतोष अधिक देखने को मिलता है। फ्रांस की सामाजिक व्यवस्था से जनता की मनोदशा को समझा जा सकता है, जिससे उद्वेलित हो जनता उस परिवर्तन के लिए उठ खड़ी हुई। 1789 से 1815 ईस्वी तक के काल में क्रांति, हिंसा, युद्ध, निरंकुशता और साम्राज्य की स्थापना एवं राष्ट्रीयता के विकास को फ्रांस में देखा जा सकता है। यह क्रांति मध्यम वर्ग के उस संघर्ष को दर्शाता है जो उच्च वर्ग से अधिकारों की लड़ाई लड़ रहा था। इसे जानने के लिए क्रांति से पूर्व की परिस्थितियों का अध्ययन करना आवश्यक है।

क्रांति पूर्व फ्रांस की परिस्थितियाँ :–

(क) दोषपूर्ण राजनीतिक व्यवस्था

1.केन्द्रीकृत शासन एवं अधिनायकवादी सत्ता :–

उस समय फ्रांस में वंशानुगत निरकुंश राजतन्त्र था। राजा को देवतुल्य माना जाता था। राजा जिसे चाहे कैद कर, बिना कारण सजा देने का अधिकार रखता था। लुई 14वें ने निरकुंशता में और बढोतरी कर दी थी। तत्कालीन शासक लुई 14वें का कहना था कि, ''मैं ही राज्य हूँ।'' यह अधिनायकवादी विचार की पराकाष्ठा थी।

2.अयोग्य शासक

लुई 14वें के विपरित लुई 15वां विलासी व अयोग्य शासक साबित हुआ। उसने शासन में सुधार की अपेक्षा सारा समय आमोद–प्रमोद में व्यतीत कर दिया था। लुई 16वें के लिए तो कहा जाता है कि वह अयोग्य, अकर्मण्य, विलासी, कान का कच्चा, बुद्धिहीन व्यक्ति था, जो अपनी पत्नी मेरी आत्वानेत के प्रभाव में था। इतिहासकार फिशर के अनुसार ''मेरी आत्वानेत राज्यरूपी जहाज को चट्टानों से टकराने के लिए ले जा रही थी।''

3.खर्चीली राजव्यवस्था

राजा पेरिस से दूर वर्साय के महलों में अपना अधिकांश समय व्यतीत करता था। जहाँ हजारों की संख्या में नौकर–चाकर उसके शान–शौकत व भोगविलास संबंधी जरूरतों को पूरा करने हेतु उपस्थित रहते थे। इन पर खर्च होने वाली राशि लाखों डॉलर हुआ करती थी।

4.भ्रष्टाचार युक्त न्याय प्रक्रिया व कानून

फ्रांस की न्याय–व्यवस्था दोषपूर्ण, अव्यवस्थित, खर्चीली, अन्यायपूर्ण तथा भ्रष्टाचारयुक्त थी। राजा के शब्द ही कानून थे । जिस प्रकार हर 5 से 8 मील पर बोली बदल जाती है उसी तरह फ्रांस में कानून बदल जाता था। समान शब्द होने पर भी कानून की व्याख्या में एकरूपता नहीं थी। इसलिए वाल्तेयर ने कहा था कि ''कानून इस प्रकार बदले जाते हैं जैसे कोई गाड़ी के घोड़े बदलता है।'' वाल्तेयर स्वयं इस कानून के दोषपूर्ण व्यवस्था के भुगतभोगी थे।

राजा को कर लगाने व वसूलने का अधिकार था। राजा के पास ऐसा कानून पत्र था जिससे वह जब चाहे किसी को भी गिरफ्तार कर सजा दे सकता था इस अधिकार पत्र (लैत्र–द–काशे) का उपयोग उसके अधीनस्थ अधिकारी व प्रशासन में सहयोगी भी किया करते थे। यह बिना नाम का आदेश–पत्र होता था, जिसमें किसी का भी नाम लिखकर उसे गिरफ्तार किया जा सकता था। लुई 15वें के शब्द थे कि ''मेरे बाद प्रलय होगा।'' अर्थात वह जानता था कि वर्तमान व्यवस्था जन–अनुकूल साबित नहीं हो रही थी।

5. असक्षम प्रतिनिधि सभा

यद्यपि एस्टेट्स जनरल नामक एक प्रतिनिधि संसद थी जिसमें कुलीन वर्ग, पादरी वर्ग, अभिजात वर्ग व सामान्य नागरिकों का प्रतिनिधित्व था, लेकिन 1614 ईसवीं के बाद उसका अधिवेशन नहीं बुलाया गया था। इसके साथ ही कुलीन पादरी व अभिजात वर्ग का इसमें बोलबाला था। पूरे देश में उच्च न्यायालयों के समकक्ष 13 पार्लेमा (कानूनों को रजिस्टर्ड करने वाली एक संस्था, उच्च न्यायालय के समकक्ष) थी जो कि कानून को पंजीकृत करने का काम करती थी। लेकिन वह भी राजा के प्रभाव क्षेत्र में थी। ये दोनों संस्थाएँ भी राजा पर नियंत्रण करने में असक्षम थी।

(ख) सामाजिक कारण

1.सामाजिक असमानता

फ्रांस में उस समय समाज तीन वर्गों में विभाजित था :

(1) पादरी (2) कुलीन (3) सामान्य वर्ग– चिकित्सक, अध्यापक, मजदूर, किसान, छोटे व्यापारी।

सम्पूर्ण समाज विशेषाधिकार प्राप्त व विशेषाधिकार विहिन वर्गों में विभाजित था।

(अ) पादरी एवं कुलीन वर्ग कई विशेषाधिकारों एव रियायतों से युक्त थे। उन पर किसी भी तरह का कोई आर्थिक दायित्व नहीं था। यह वर्ग फ्रांस की सम्पूर्ण जनसंख्या का एक प्रतिशत से भी कम था। इसके विपरित सम्पूर्ण संपत्ति का पाँचवां भाग इनके पास था। उन्हें किसी भी तरह की कोई कर अदायगी नहीं करनी पड़ती थी। दूसरी ओर मध्यम वर्ग व निम्न वर्ग करों के बोझ से दबे हुए थे। उन्हें राजा के साथ पादरी वर्ग को अतिरिक्त अदायगी भी करनी होती थी। एक अधिकारविहीन बौद्धिक वर्ग था, जो लगाातार समान कानून व समान कराधान की मांग कर रहा था।

नेपोलियन बोनापार्ट ने भी इस सामाजिक असंतुलन से त्रस्त तथा परिवर्तन के लिए व्याकुल मध्यम वर्ग को क्रांति के लिए उत्तरदायी माना है।

(ब) किसान एवं मजदूर वर्ग :–फ्रांसिसी समाज में सर्वाधिक जनसंख्या वाला यह वर्ग विशेषाधिकारविहिन वर्ग था । इन कृषकों की दशा राजा, पादरी और कुलीन वर्ग के कारण अत्यंत दयनीय हो चुकी थी। उनकी कमाई का 80 प्रतिशत भाग कर चुकाने में चला जाता था। सम्पूर्ण फ्रांस का आर्थिक भार इन किसानों को उठाना पड़ता था। इसके साथ–साथ इन्हें उच्च वर्ग की बेगारी भी करनी थी। स्वतंत्र किसान के विपरीत दास–कृषक बिना जमींदार के आज्ञा के गाँव नहीं छोड़ सकता था। किसानों की निम्न सामाजिक व आर्थिक दशा उन्हें मौजूदा व्यवस्था के विरूद्ध विद्रोह के लिए उकसा रही थी। किसानों के साथ–साथ मजदूर वर्ग की दशा भी शोचनीय थी। उन्हें कम वेतन पर अधिक कार्य करना होता था। यह वर्ग मध्यम वर्ग के सम्पर्क में रहने के कारण राजनैतिक रूप से किसानों की तुलना में अधिक सजग था।

(स) मध्यम वर्गः– इस वर्ग में छोटे व्यापारी, शिक्षक, वकील, चिकित्सक, कलाकार, एवं सरकारी कर्मचारी आते थे। फ्रांसिसी क्रांति में सर्वाधिक योगदान इस वर्ग का था। यह वर्ग समाज में उच्च पद व प्रतिष्ठा प्राप्त करने की आशा करता था। शिक्षित व धन सम्पन्न होने के कारण कुलीन वर्ग से ईर्ष्या की भावना उन्हें व्यवस्था परिवर्तन करने के लिए प्रेरित कर रही थी। पादरी वर्ग से भी उन्हें द्वेष था। वह जानते थे यह अनुत्पादक वर्ग बिना कुछ करे भी सामाजिक व प्रशासनिक ढाँचे में उनसे ऊपर है। अतः यह मेहनती वर्ग राजनैतिक व सामाजिक समानता की लगातार मांग कर रहा था। यह मध्यम वर्ग कुलीन वर्ग से बराबरी की मांग करते हुए उनके विशेषाधिकारों की समाप्ति का इच्छुक था।

2.चर्च में व्याप्त भ्रष्टाचार

चर्च में घोर भ्रष्टाचार था। ये जनसाधारण पर मजहबी कर लगाते थे। चर्च के पास अपार धन सम्पदा थी। चर्च अपने अधिकारों को कठोरता से लागू करता था। पादरी वर्ग शान–शौकत का विलासी जीवन व्यतीत करते थे। जन साधारण से प्राप्त धन का उपयोग अनैतिक जीवन जीने में किया जा रहा था। इसके विपरीत ग्रामीण क्षेत्रों के छोटे चर्च के पादरी साधारण जीवन व्यतीत करने को मजबूर हो रहे थे। वे स्वयं इस व्यवस्था से निराश थे।

3.वंशानुगत व उच्चाधिकार प्राप्त प्रशासनिक वर्ग

राज्य के उच्च पदों पर आसीन अधिकारी कुलीन वर्ग से आते थे। यह समस्त नागरिक व सैनिक प्रशासन के उच्च पदों पर आसीन हो समाज में प्रतिष्ठा व सम्मान प्राप्त करते थे। यह वर्ग भी करों से मुक्त था। इन अधिकारियों पर करों का संग्रह, कानून व्यवस्था एवं देश की सुरक्षा का भार था। साथ ही ये अपने क्षेत्रों में न्याय देने का कार्य भी करते थे। इनके द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र में होने वाले सम्पत्ति के क्रय–विक्रय पर किसानों से कर वसूला जाता था। कृषक वर्ग इन सामन्तों के यहां घरों व खेतों में बेगार, शराब बनाने व चक्की चलाने का कार्य किया करते थे। लुई 14वें के समय में शासन को अत्यधिक केन्द्रीकृत करते हुए यद्यपि कुलीन वर्ग की शक्तियों को सीमित कर दिया गया था, फिर भी यह विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग था।

(ग) आर्थिक कारण

देश की अर्थव्यवस्था अत्यन्त ही दयनीय व शोचनीय दौर से गुजर रही थी। हर मील पर लगने वाली चुंगी एवं बदलते कानूनों ने मुक्त व्यापार पर रोक लगा रखी थी। कृषकों से कर वसूलने का तरीका भी दोषपूर्ण था। ठेकेदार के माध्यम से करों की उगाही होती थी। करों की दरें भी अलग–अलग रियासतों में अलग–अलग थी। कर वसूली की प्रणाली अत्यन्त दोषपूर्ण, अमानवीय, दुखदायी व भ्रष्टाचार से युक्त थी। किसानों द्वारा उगाई जाने वाली फसलों का 80 प्रतिशत भाग तो चर्च, सामन्त व राजा द्वारा ही ले लिया जाता था। चर्च ''टाइथ'' नामक कर वसूलता था। जो कुल फसल का दसवाँ हिस्सा था। अमेरिकी

संघर्ष में भाग लेना इस शोचनीय आर्थिक दशा के लिए प्रत्यक्ष रूप से उत्तरदायी था। अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने में फ्रांस ने करोड़ों डॉलर का घाटा उठाते हुए राष्ट्रीय आय को ब्याज चुकाने में खर्च कर दिया। आस्ट्रिया के उत्तराधिकार युद्ध में भाग लेना भी राष्ट्रीय आय के लिए घातक सिद्ध हुआ। फ्रांस का राजा, राजपरिवार व राजदरबार तो पहले से ही राष्ट्रीय आय का अधिकांश हिस्सा उपभोग कर रहे थे। राजा की विलासिता, भोग विलास एवं शान–शौकत में कई डालर खर्च हो जाते थे। विशेषाधिकार युक्त वर्ग कुलीन व पादरी किसी भी प्रकार का कोई कर नहीं देते थे। बल्कि कृषकों से कर वसूल कर उसे फिजूल खर्च करते थे। भूमिकर, आयकर प्रत्यक्ष रूप से वसूल किये जाते थे। जबकि परोक्ष कर नमक, शराब एवं तम्बाकु पर लगता था। नमक का एकाधिकार एक कम्पनी के हाथ में था। वह मनमाने रूपये वसूल करती थी। राजा ने भी नमक कर नहीं देने को दण्डित करने का अधिकार कम्पनी को दे रखा था। सात वर्श से अधिक उम्र के प्रत्येक फ्रांसिसी को 7 पौंड वार्शिक नमक कर देने की बाध्यता थी। नमक का अवैध व्यापार करने पर मृत्यु दण्ड तक दिया जा सकता था।

अमेरिकी संघर्ष में अपनाई गई फ्रांस की अविवेकपूर्ण नीति

अमेरिकी संघर्ष में भाग लेने से यद्यपि फ्रांस द्वारा सप्तवर्षीय युद्ध में हुई हार का बदला इंग्लैण्ड से ले लिया गया था। लेकिन इस संघर्ष में फ्रांस को आर्थिक लाभ की प्राप्ति नहीं हुई बल्कि इसके उलट स्वयं की आर्थिक स्थिति ही डाँवाडोल हो गई।

आर्थिक विषमताओं ने फ्रांस की पूर्व में ही स्थिति बदतर कर रखी थी उसे अमेरिकी संघर्ष ने और बढ़ा दिया। दूसरी ओर फ्रांसिसी सैनिक भी भोजन, वस्त्र व वेतन को लेकर वर्तमान शासन व्यवस्था से असंतुष्ट थें।

(घ) बौद्धिक चेतना

फ्रांस में व्यवस्था परिवर्तन के लिए जिस जागरूता की आवश्यकता थी उसे आधार देने व प्रचारित करने का कार्य मध्यमवर्गीय विचारकों द्वारा किया गया। इस मध्यम वर्ग में वाल्तेयर, दिदरो, रूसो, मोंटेक्स्यू इत्यादि विद्वान शामिल थे, जिन्होंने फ्रांस की क्रांति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। यह वाद–विवाद व तर्को के माध्यम से जन साधारण को यह समझाने में सफल रहे थे कि मौजूदा व्यवस्था के लिए पादरी व कुलीन लोग ही दोषी हैं। ये खुले व्यापार तथा कानून व करों की समानता के समर्थक थे।

यह बौद्धिक वर्ग व्यंग्य, कविता , नाटक, वाद–विवाद, तर्कपूर्ण वैज्ञानिक व्याख्या तथा कार्यशालाओं के माध्यम से समाज के तत्कालीन असंतोष को बढ़ावा दे रहे था। इन्होंने विशेषाधिकारों पर आधारित संस्थाओं को फ्रांसिसी समाज की

चित्र–4.8 : फ्रांसिसी क्रांति

तत्कालीन असंतोषजनक परिस्थितियों के लिए उत्तरदायी ठहराया तथा उन्हें समाप्त करने पर बल दिया। उनके विचारों के केन्द्र में मनुष्य ही था। ''मनुष्य के सर्वांगीण विकास के लिए राज्य को प्रयत्नशील रहना चाहिए,'' ऐसा वो मानते थे। मोंटेस्क्यू, रूसो, वोल्तेयर , तुर्गो, क्वेस्ने, दिदरो इत्यादि बौद्धिक विचारकों ने उस आदर्श समाज की स्थापना पर बल दिया जो उदार पांथिक सहिष्णुता, प्रजातांत्रिक एवं राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक समानता लिए हुए हो। इन दार्शनिकों ने स्वतंत्र चिंतन पर बल देते हुए फ्रांस की पुरातन व्यवस्था को समाप्त करने का आह्वान जनता से किया था।

फ्रांस के प्रबुद्ध वर्ग ने प्रशासन में फैले अन्याय अराजकता, भ्रष्टाचार के विरोध में आवाज उठानी प्रारम्भ कर दी। रूसो का कहना था कि उस शासक को राज करने का अधिकार नहीं जो जनता की अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरता है। मोन्टेस्क्यू द्वारा दिया गया शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त आज भी प्रजातन्त्र का आधार बना हुआ है। इसके अनुसार कार्यपालिका, न्यायपालिका व विधायिका को पृथक्–पृथक् होना चाहिए। वाल्तेयर देश में फैले हुए भ्रष्टाचार के लिए चर्च के भोग–विलास को ही उत्तरदायी मानता था। मोन्टेस्क्यू ने अपनी रचना ''फारस के खत'' में फ्रांस के रीति–रिवाजों तथा निरंकुश अत्याचारी राजतंत्र का विरोध किया था।

रूसो द्वारा लिखित रचना ''सामाजिक संविदा'' में मानव स्वतंत्रता पर बल दिया गया था, वह स्वतंत्रता, समानता तथा बन्धुत्व जैसे सिद्धान्तों का शाष्यकर्त्ता था। रोब्सपियर उसका अनुयायी था तथा वह रूसो द्वारा लिखित पुस्तक ''सामाजिक संविदा'' सदैव अपने पास रखता था। रूसो ने कहा था कि ''मनुष्य स्वतंत्र पैदा हुआ है, लेकिन आज वह सर्वत्र जंजीरों से जकड़ा हुआ है।'' अब मनुष्यों को पुनः अपनी प्राकृतिक अवस्था में लौट कर समस्त संस्थाओं और उसके बन्धनों से मुक्त हो जाना चाहिये। नेपोलियन ने रूसो को फ्रांस की क्रांति का प्रमुख उत्तरदायी व्यक्ति बताया था।

वाल्तेयर का मानना था कि ईश्वर हृदय में है, बाइबिल और चर्च में नहीं। उसने पोप को विदेशी कह कर सम्बोधित किया। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर वह बल देता था। भ्रष्ट राजतंत्र का का विरोध करते हुए उसने यहाँ तक कहा कि ''मैं जानता हूँ कि तुम्हारी बात गलत है फिर भी तुम्हारी अभिव्यक्ति के अधिकार के लिये मैं अपनी जान तक देने को तैयार हूँ।''

सुधार के असफल प्रयास

लुई 16वें का वित्तमंत्री तुर्गो एक अर्थशास्त्री तथा राजनीतिज्ञ था। उसने सरकारी व्यय में कमी के प्रयास करते हुए राजकीय आय को बढ़ाने के प्रयास शुरू किए। तुर्गो द्वारा इन नियमों पर कार्य करने का प्रयास किया गया– (अ) दिवालियापन नहीं (ब) कर वृद्धि नहीं (स) कोई ऋण नहीं। तुर्गो ने व्यापार व उद्योग में वृद्धि हेतु स्वतंत्रता व्यापार का सिद्धान्त लागू कर दिया। उसने व्यावसायिक श्रेणी का अन्त कर दस्तकारों और कारीगरों को प्रोत्साहित किया। उसके द्वारा किसानों के लिए दुःखदायी कोरवी नामक कर समाप्त कर दिए गए। अब कृषकों को सड़क पर काम के बदले मजदूरी प्राप्त होने लगी। तुर्गो ने जब नमक कर तथा विशेषाधिकारों का अन्त करने का प्रस्ताव राजा के समक्ष रखा तो तथा विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग ने रानी मारी को अपनी ओर मिला लिया तथा षड़यंत्र कर तुर्गो को मंत्री पद से हटवा दिया।

इसके बाद नियुक्त वित्त मंत्री नेकर एक बैंकर था उसने राजा को अमेरिकी संघर्ष में भाग नहीं लेने की सलाह दी थी। इसने राज्य की आय–व्यय के आंकड़ों को सार्वजनिक रूप से प्रकाशित करवा दिया। इसमें राजा, दरबारी, कुलीन वर्ग (अनुत्पादक वर्ग) के बेहिसाब खर्चों का उल्लेख था। अंततः इस वित्तमंत्री को भी हटा दिया गया। केटलवी के अनुसार ''नेकर के पतन के साथ ही ऐच्छिक सुधारों के युग का भी अन्त हो गया।

नेकर के बाद 1781 ईस्वी में केलोन वित्त मंत्री नियुक्त हुआ। इसने सरकारी घाटे को कर्ज लेकर चुका दिया। लेकिन शीघ्र ही यह रास्ता भी बंद हो गया। इसने पहले दो वित्त मंत्रियों से आगे बढ़ते हुए तीन सामाजिक वर्गो पर समान रूप से कर लगाने की मांग कर डाली।

अपने प्रति उच्च वर्गों का विरोध देखते हुए केलोन ने स्वयं ही त्यागपत्र दे डाला। ब्रिया को वित्त मंत्री बनाया जिसने आर्थिक सुधारों के लिये एस्टेटस जनरल अधिवेशन की सलाह दी जिसे राजा को स्वीकार करना पड़ा।

क्रांति की प्रमुख घटनाएँ एवं चरण

एस्टेटस् जनरल का आह्वान (5 मई 1789 ईस्वी)

केलोन के त्यापत्र देने के बाद राजा के पास नये कर लगाने के अलावा कोई चारा नहीं बचा। लेकिन पेरिस की पार्लेमा सहित अन्य पार्लेमाओं ने इसका जोरदार विरोध किया साथ ही इन्हें रजिस्टर करने से भी इन्कार कर दिया। जनता व सेना भी पार्लेमा के साथ हो गई। अब सभी ने एकमत से एस्टेट्स जनरल बुलाने की मांग शुरु की। राजा ने नेकर को पुनः वित्तमंत्री नियुक्त कर दिया। लेकिन अब बहुत देर हो चुकी थी। एस्टेट्स जनरल का पहला अधिवेशन 1320 ईस्वी में फिलिप द–फेयर के समय हुआ था, लेकिन 1614 ईस्वी के पश्चात् कोई अधिवेशन नहीं बुलाया गया। इस संस्था में तीनों

चित्र–4.9 : टेनिस कोर्ट की शपथ

वर्गों का प्रतिनिधित्व था। यह संस्था सलाहकारी संस्था थी। यहाँ बैठने वाले पादरी, कुलीन व जनसाधारण एक–एक वर्ग के रूप में बैठते थे तथा कुल मत भी तीन होते थे। अतः कुलीन व पादरी वर्ग दो मत डाल बहुमत में रहता था। राजा ने नेकर की सलाह मानते हुए साधारण वर्ग के प्रतिनिधियों की संख्या दुगुनी कर दी ताकि कुलीन वर्ग व पादरियों को कर देने हेतु विवश कर दिया जाए। जनसाधारण वर्ग व्यक्तिगत रूप से मत देने की मांग कर रहा था ताकि उनकी उपस्थिति प्रभावी ढंग से कुछ निर्णयों को पारित कर सके। दूसरी ओर कुलीन व पादरी वर्ग श्रेणी के अनुसार मत देने का इच्छुक था। 5 मई 1789 ईस्वी को एस्टेट्स जनरल का अधिवेशन बुलाया गया। तीनों वर्गो ने अपने–अपने प्रतिनिधियों का चुनाव एस्टेट्स जनरल में मत देने हेतु कर लिया। चुनाव में 308 पादरी, 285 कुलीन वर्ग के और 621 साधारण वर्गो के सदस्य चुने गये। इस प्रकार कुल 1214 सदस्य थे और वैकल्पिक सदस्यों की संख्या मिलाकर कुल संख्या 1600 से भी अधिक हो गयी। उद्घाटन भाषण में राजा ने अधिवेशन की कार्य प्रणाली का जिक्र नहीं किया। तृतीय सदन के सदस्य तीनों सदनों की संयुक्त बैठक की मांग कर रहे थे लेकिन प्रथम व द्वितीय सदन के सदस्य साधारण वर्ग के सदस्यों के साथ बैठने को तैयार नहीं थे। अब विशेषाधिकार युक्त (कुलीन एवं पादरी वर्ग) व विशेषाधिकारविहिन वर्ग (जनसाधारण वर्ग) एक दूसरे के सामने थे। जिनके हित परस्पर विरोधी थे। अब यह प्रश्न उठ खड़ा हुआ कि तीनों वर्गो के तीन मत हों या सदन एक ही हो तथा प्रत्येक सदस्य को मत देने का अधिकार प्राप्त हो। इस पर निर्णय नहीं हो सका।

लेकिन 28 मई को आबेसाइस व वेली नामक विधिवेत्ता जनसाधारण वर्ग (तृतीय सदन) के पक्ष में सम्मिलित हो गये। इससे प्रोत्साहित हो 17 जून को जनसाधारण वर्ग (तृतीय सदन) ने स्वयं की सभा को राष्ट्रीय महासभा (नेशनल असेम्बली) घोषित कर दिया। इस पर 19 जून को पादरी वर्ग भी इसके पक्ष में सम्मिलित हो गया। जब 20 जून को वे बैठक में आये तो राजा ने सभा भवन पर ताला लगवा उसे बन्द कर दिया।

टेनिस कोर्ट की शपथ (20 जून 1789 ईस्वी)

20 जून को राजा ने कुलीनों के पक्ष में सभा भवन पर ताला लगवा दिया इस परिस्थिति में जनसाधारण वर्ग ने पास के टेनिस मैदान पर ही सभा कर डाली। मिराबो व ओबेसाइस भी इसमे सम्मिलित हुए। सभी सदस्यों ने संविधान बनने तक उसी टेनिस मैदान में डटे रहने की शपथ ली। मोनियर द्वारा रखे गये प्रस्ताव पर यह शपथ ली गई थी। यह शपथ ''टेनिस कोर्ट की शपथ'' के नाम से जानी जाती है।

राष्ट्रीय महासभा (27 जून 1789 ईस्वी)

27 जून को राजा ने असफल होकर तीनों सदनों के सयुक्त अधिवेशन का आदेश दे दिया। यह फ्रांस की जनता की विजय थी। अब राष्ट्रीय महासभा को संविधान सभा कह कर संबोधित किया गया।

चित्र–4.10 : बास्तील दुर्ग का पतन

बास्तील दुर्ग का पतन (14 जुलाई 1789 ईस्वी)

सविधान सभा के कार्य के दौरान ही राजा ने रानी व कुलीनों के दबाव में नेकर को वित्तमंत्री पद से पदच्युत कर दिया, साथ ही सेना को बुला भेजा। इसमें विदेशी सैनिकों की संख्या ज्यादा थी। जनता में इसकी प्रतिक्रिया हुई उन्होंने नेशनल गार्ड संगठन का गठन कर लिया जो जनता की जान–माल की सुरक्षा करने वाला था। केसमाईल देसमोला नामक नेता ने जनता को हथियार उठाने हेतु आह्वान किया। 14 जुलाई को पेरिस में भीड़ ने बास्तील नामक किले पर अधिकार कर वहाँ के कैदियों को छुड़ा लिया। यह किला जनता पर अत्याचार का गवाह रहा था। इसका पतन राजनैतिक रूप से निरंकुश शासन का अंत था। जनता ने राजा के सफेद झण्डे को त्याग कर लाल–सफेद व नीले रंग के झण्डे को अपना लिया। 14 जुलाई को राष्ट्रीय अवकाश घोषित किया गया। किसानों ने सामन्तों व जमीदारों के घर–सम्पत्ति व दस्तावेजों को आग के हवाले कर दिया। बास्तील दुर्ग के पतन पर राजा लुई के ये शब्द थे कि " अरे! यह तो विद्रोह है।" पास खड़े लिआंकुर ने कहा कि "नहीं सरकार यह क्रांति है।"

विशेषाधिकारों का अन्त (4 अगस्त 1789 ईस्वी)

4 अगस्त 1789 ई. की रात फ्रांस में एक नये युग की शुरूआत लेकर आयी । सर्वप्रथम नोआइय नामक कुलीन ने घोषणा की कि "समस्त समस्याओं का कारण करों की असमानता और विशेषाधिकार हैं, मैं अपने विशेषाधिकार त्यागता हूँ।"

अब कुलीनों और पादरी वर्ग ने स्वयं विशेषाधिकार त्याग दिये। पादरियों द्वारा सभी मजहबी कर समाप्त कर दिए गए। न्यायाधीशों ने उपाधियों को त्याग दिया। सरकारी सेवाओं के द्वार सभी के लिए समान रूप से खोल दिए गए।

मानव अधिकारों की घोषणा – (27 अगस्त 1789 ईस्वी)

राष्ट्रीय सभा ने लफायत के प्रस्ताव पर मानव अधिकार घोषणा पत्र जारी किया। इस घोषणा पत्र में क्रांति के वे निश्चित उद्‌देश्य व सिद्धान्त निहित थे जिन्हें जनता समझ पाएँ और ये भविष्य में बनने वाले संविधान का आधार बनें। मानवाधिकारों की घोषणा के इस पत्र के सम्बंध में एक्टन का कथन था– "यह कागज का टुकड़ा नेपोलियन की विजय से ज्यादा महत्त्वपूर्ण था।"

घोषणा पत्र के प्रमुख इस प्रकार है–

1. मनुष्य के जन्म से प्राप्त कुछ अधिकार प्राकृतिक होते हैं जैसे स्वतंत्रता। इन्हें छीना नहीं जा सकता लेकिन एक मनुष्य की स्वतंत्रता दूसरे मनुष्य की स्वतंत्रता में बाधक नहीं होनी चाहिए।

2. बिना कानूनी आधार किसी को गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है।

3. राज्य नागरिकों की जान–माल एवं अधिकारों की सुरक्षा हेतु है।

4. राज्य का कानून उस राज्य के व्यक्तियों की इच्छा की अभिव्यक्ति है।

5. योग्यता के आधार पर सरकारी सेवाओं में जाने का सभी को अधिकार है।

6. निजी सम्पत्ति का अधिकार लागू किया गया।

7. मजहब की स्वतंत्रता का अधिकार लागू किया गया।

8. अभिव्यक्ति (प्रेस) की स्वतंत्रता लागू की गई।

स्त्रियों का अभियान – 5 अक्टूबर को 6–7 हजार महिलाएं सम्राट के महल वर्साय पहुच गई और रोटी की मांग करने लगी। राजा एवं उसके परिवार को पेरिस लाने की मांग होने लगी। राजा भीड़ का कैदी हो गया। 6 अक्टूबर को राजा व राजपरिवार, को सम्पूर्ण मार्ग में भीड़ उत्साहित दिख रही थी। नाच–गाने के साथ यह नारा कि 'हमारे साथ रोटी वाला और उसका परिवार है' बराबर लगाया जा रहा था। पेरिस में राजा की स्थिति एक बन्दी के समान हो गई। दस दिन पश्चात् राष्ट्रीय सभा भी पेरिस में आ गई।

चित्र–4.11 : स्त्रियों का अभियान

सिविल कांस्टीट्यूशन ऑफ क्लर्जी – यह पादरियों के लिए लागू किया गया संविधान था। इसके माध्यम से चर्च को राज्य के अधीन कर दिया गया। पादरी वर्ग अब वेतन भोगी राज्य कर्मचारी बना दिया गया। पादरियों को संविधान के प्रति शपथ लेनी होती थी। जिन पादरियों ने इस संविधान को सहज स्वीकार कर लिया वो ज्यूरर कहलाए तथा जिन्होंने इस संविधान को अस्वीकार किया वे पादरी नान ज्यूरर कहलाए।

1791 ईस्वी का लिखित संविधान – 1791 ई. में प्रथम बार लिखित संविधान की रचना की गयी। संविधान जनता की इच्छाओं (काहियाओं) के आधार पर तैयार किया गया।

1. राजा को वेतनभोगी बना उसकी शक्तियों को सीमित कर दिया गया।

2. जनता की शक्ति को सर्वोच्च माना गया अर्थात् जन–संप्रभुता का सिद्धांत लागू किया गया।

3. मांटेस्क्यू द्वारा दिया गया शक्ति पृथक्करण का सिद्धांत लागू कर दिया गया।

राजा का पलायन – 20 जून 1791 ई. को फ्रांस का राजा लुई बरेन गांव के समीप भागने का प्रयास करते हुए पकड़ लिया गया। इस घटना ने राजतंत्र की समाप्ति और गणतंत्र की स्थापना सुनिश्चित कर दी। 21 जनवरी 1793 को फ्रांस के राजा लुई सोलहवें को मृत्युदण्ड दे दिया गया। इस घटना ने समस्त यूरोपीय देशों को फ्रांस की जनता के विरूद्ध कर दिया।

प्रशा व ऑस्ट्रिया के विरूद्ध युद्ध की घोषणा–अप्रेल1792 ईस्वी में नेशनल असेम्बली ने प्रशा और आस्ट्रिया के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी। क्योंकि इनके निरंकुश शासक लुई 16 वें की मदद करने का प्रयास कर रहे थे। क्रांतिकारियों ने इस युद्ध को यूरोपीय राजाओं एवं कुलीनों के विरूद्ध जन सामान्य का युद्ध कहा। इस समय कवि राजेट दि लाइल द्वारा रचित "मार्सिले" गीत भी स्वयंसेवकों द्वारा गाया गया। यह मार्सिले गीत आज फ्रांस का राष्ट्रगान है।

सितम्बर हत्याकांड– प्रशा के सेनापति ने फ्रांसिसी जनता को फ्रांस के शासक को मुक्त करने का आदेश दिया। ऐसा नहीं करने पर परिणाम भुगतने की धमकी भी दी। इस घोषणा ने फ्रांसिसी जनता को भड़का दिया। 10 अगस्त 1792 ईस्वी के दिन भीड़ ने राजमहल पर आक्रमण कर राजा के रक्षकों को मार दिया। इस विद्रोह में लगभग 800 स्विस सैनिक मारे गए। अब राजतंत्र को हटाने की मांग की जाने लगी। जैकोबिन दल के सदस्यों ने नया संविधान बनाने की मांग रखी। अब अस्थायी कार्यपालिका का निर्माण कर दांते को उसका अध्यक्ष बनया गया। सम्पत्ति पर आधारित मताधिकार को समाप्त कर सार्वभौमिक मताधिकार तैयार किया गया। दांते ने उन सभी लोगों को मौत के घाट उतार दिया जिन पर राजा या शत्रु देशों को सहायता पहुंचाने की आशंका थी। यह हत्याकांड 2 से 6 सितम्बर के बीच हुआ। इसीलिए इसे "सितम्बर हत्याकाण्ड" कहा जाता है।

नेशनल कन्वेंशन (1792 – 1795 ईस्वी) – इसका शासन 20 सितम्बर 1792 ईस्वी से 26 अक्टूबर 1795 ईस्वी के मध्य रहा। यह काल जैकोबिन व जिरोंदिस्त दलों के मध्य हुए संघर्ष तथा जैकोबिनों द्वारा किए गए हत्याकाण्डों के लिए जाना जाता है। बावजूद इनके कन्वेंशन द्वारा देश को स्थायित्व प्रदान करते हुए गणतंत्र की स्थापना की गयी थी। जैकोबिन व जिरोंदिस्त दल

पेरिस के महत्त्व, राजा पर अभियोग एवं सितम्बर हत्याकाण्ड के उत्तरदायित्व के प्रश्नों पर बंटा हुआ था। सितम्बर हत्याकाण्ड जैकोबिन दल के सदस्यों द्वारा किए गए थे। जिरोंदिस्त चाहते थे कि इसके लिए उत्तरदायी व्यक्तियों दांते व मारा को सजा दी जाये। जिरोदिस्त दल जेकोबिन दल द्वारा पेरिस को अत्यधिक महत्त्व देने के खिलाफ थे। जिरोदिस्त अभियोग चलाकर ही राजा को सजा देना चाह रहे थे। जबकि जैकोबिन इस कार्य को तुरन्त बिना अभियोग के ही करने के पक्षधर थे। राजा को कन्वेंशन में हुये मतदान के आधार पर 21 जनवरी 1793 ईस्वी को मृत्युदण्ड दे दिया गया। इस घटना को इग्लैण्ड, जर्मनी, आस्ट्रिया, इटली के राज्यों, रूस, स्पेन, हॉलेण्ड को फ्रांस के विरूद्ध कर दिया। जैकोबिन दल के नेता रोब्सपीयर, मारा, व दांते जिरोंदिस्तो से नफरत करते थे इसी कारण अब फ्रांस गृह युद्ध की चपेट में आ गया। फ्रांस में दो सरकारें काम करने लगी। एक पेरिस की सरकार या कम्यून या जैकोबिन दल तथा दूसरी शेष फ्रांस की सरकार या जिरोंदिस्त दल या कन्वेन्शन की सरकार।

कन्वेन्शन की सरकार क्रांतिकारी फ्रांस की तीसरी संसद थी इसके कार्यकाल में ही 21 सितम्बर 1792 ई. को राजतंत्र की समाप्ति व गणतंत्र की स्थापना कर दी गई। उस समय देश के भीतर व बाहर क्रांतिविरोधियों की संख्या बढ़ती जा रही थी। इसे नियंत्रित करने के लिए नेशनल कन्वेंशन द्वारा मार्च 1793 ई. से लेकर जुलाई 1794 ई. तक आतंक का शासन स्थापित किया गया। इसके तहत शक्तिशाली कार्यपालिका का गठन कर क्रांति विरोधियों को मृत्यु दण्ड दिया गया। इसके तीन अंग थे – 1. जन रक्षा समिति 2. सामान्य सुरक्षा समिति 3. न्यायपालिका

फ्रांस की राजनीति में उस समय गणतंत्रवादी समर्थक दो प्रमुख दल थे – 1. जिरोंदिस्त 2. जैकोबिन

1. जिरोंदिस्त दल – इस दल के अधिकांश नेता फ्रांस के जिरोंद प्रान्त से सम्बन्धित थे इस कारण इनका दल जिरोंदिस्त कहलाया। जिरोंदिस्त दल के नेता आदर्शवादी, गणतंत्रवादी व उत्साही व्यक्ति थे लेकिन वे अनुभवहीन व अव्यवहारिक व्यक्ति थे। इस कारण 1791 ई. की व्यवस्थापिका सभा में इस दल का बहुमत होने पर भी वे जैकोबिन दल से संघर्ष में पराजित हो गए। वे पेरिस के अत्यधिक महत्त्व के विरूद्ध थे। इसी कारण उनका कहना था कि "पेरिस फ्रांस नहीं है।" ब्रिसो व मादाम रोला इस दल के प्रमुख नेता था।

2. जैकोबिन – इस दल का केन्द्र पेरिस था। इस दल के सदस्य अधिक व्यवहारिक व उग्र गणतंत्रवादी व्यक्ति थे। इनके द्वारा गणतंत्र की सुरक्षा हेतु आतंक का राज्य स्थापित किया गया था। दान्ते, राब्सपियर, हैबर, मारा इस दल के प्रमुख नेता थे। रोब्सपियर द्वारा ही आतंक का शासन स्थापित किया गया था। वह फ्रांस में सद्‌गुणों का राजतंत्र स्थापित करना चाहता था। इस दल की अधिकांश बैठकें पेरिस के कॉन्वेन्ट ऑफ सेन्ट जैकब गिरजाघर में होती थी। इस कारण यह दल जैकोबिन कहलाया।

चित्र–4.12 : जैकोबिन दल के सदस्य

जैकोबिन दल के सदस्यों में छोटे दुकानदार, कारीगर, घड़ीसाज, नौकर व मजदूर शामिल थे। जैकोबिन दल के सदस्य लम्बी पतलून पहनते थे। इस कारण उन्हें "सौ कुलात" के नाम से जाना गया। ये स्वतन्त्रता की प्रतीक लाल टोपी भी पहनते थे। उस समय कुलीन वर्ग धारीदार ब्रीचेस (घुटन्ना) पहनते थे। इस प्रकार सौ कुलाँत (बिना घुटन्ने वाला) कुलीनों के विरोध का प्रतीक था।

आतंक का शासन – आतंक का शासन रोब्सपीयर द्वारा गणतंत्र की रक्षा, आन्तरिक विद्रोह के दमन व फ्रांस की विदेशी आक्रमणों से रक्षा के लिए स्थापित किया गया था। रोब्सपीयर द्वारा नियंत्रण एवं दण्ड की सख्त नीति अपनाई गई। वास्तव में जैकोबिन दल के नेताओं ने आतंक का उपयोग व्यक्तिगत व दलगत वैमनस्य तथा निजि महत्वाकांक्षाओं के लिए किया था। वैसे तो इससे बाहरी शत्रुओं और क्रांति विरोधियों पर सफलता तो मिली थी लेकिन इसे लगातार जारी रखना गलत था। दांते द्वारा विद्रोहों के दमन के पश्चात् इसे समाप्त करने पर बल दिया गया था। लेकिन रोब्सपीयर ने इसे गिलोटिन पर चढ़वा दिया। इस महाआतंक की समाप्ति 27 जुलाई 1794 ईस्वी को रोब्सपीयर के पतन के साथ ही हुई। यह दौर सम्पूर्ण क्रांति पर कलंक के समान है।

चित्र 4.13 : गिलोटिन (आतंक का शासन)

नेशनल कन्वेंशन द्वारा 1795 ईस्वी में नया संविधान बना दिया गया। इसके द्वारा शासन की शक्ति 5 व्यक्तियों की समिति को सौंप दी गई। यह व्यवस्था डायरेक्टरी व्यवस्था कहलाई।

डायरेक्टरी व्यवस्था — यह व्यवस्था अक्टूबर 1795 ईस्वी से नवम्बर 1799 ईस्वी तक रही। यह पूर्णतया असफल सिद्ध हुई। डायरेक्टरी (संचालक मण्डल) का शासन आन्तरिक प्रशासन के मामलों में दुर्भाग्यशाली रहा मगर वैदेशिक मामलों में उसने सफलता प्राप्त की। संचालक मण्डल ने 1795 ईस्वी से ही स्पेन प्रशा, हॉलैण्ड, पुर्तगाल, जर्मनी व इटली के राज्यों से सन्धि कर युद्ध समाप्त करने में सफलता प्राप्त कर ली। दूसरी ओर नेपोलियन बोनापार्ट द्वारा ऑस्ट्रिया को युद्ध में हरा दिया गया। अब केवल इंग्लैण्ड ही शेष था जो फ्रांस को आँख दिखा रहा था। मगर संचालक मण्डल के सदस्य अपनी अयोग्यता के कारण प्रांतीय दंगों को रोकने में असमर्थ रहे। जैकोबिन दलों के सदस्यों ने पैन्थियन नामक सोसायटी की सदस्यता ग्रहण कर संचालक मण्डल का विरोध प्रारम्भ कर दिया। यह संस्था ट्रिब्यून नामक पत्रिका निकालती थी। बढ़ती महंगाई ने देश की हालत जर्जर कर रखी थी। इन सभी हालातों ने नेपोलियन के उत्थान में मदद दी।

फ्रांसिसी क्रांति का प्रभाव

1.सामन्ती व्यवस्था का अन्त

लुई 14वें के समय यद्यपि सामन्ती व्यवस्था पर नियंत्रण करते हुए शासन को केन्द्रीकृत कर दिया गया था, लेकिन क्रांतिकाल में सामन्त व्यवस्था को पूर्णतया समाप्त कर दिया गया। यह अपमानजनक व्यवस्था सदियों से आर्थिक शोषण का पर्याय थी। समानता के सिद्धान्त पर सामन्ती व्यवस्था को समाप्त कर दिया गया।

2.राष्ट्रीयता का उदय

फ्रांस से उठी राष्ट्रीयता की लहर ने जल्दी ही समस्त यूरोप को अपनी जकड़ में ले लिया। यही राष्ट्रीयता की लहर इटली व जर्मनी में एकीकरण की प्रेरणा रही है। इसी कारण विश्व मानचित्र पर इन दो देशों का उदय हुआ। राष्ट्रीयता की इसी लहर ने स्पेन को आगे चलकर नेपोलियन के विरूद्ध संघर्ष के लिए प्रेरित किया। प्रत्येक देश के नागरिक अपने देश की रक्षा व गौरव के लिए त्याग, बलिदान व संघर्ष की भावना से उठ खड़े हुए। राष्ट्रीयता की भावना ने परतंत्रता से ग्रसित देशों को स्वतंत्र होने के लिए साम्राज्यवादी देशों के विरूद्ध आन्दोलन करने का साहस दिया।

3. प्रजातांत्रिक भावना का उदय

फ्रांस की जनता ने निरंकुश व वंशानुगत राजतंत्र का शासन समाप्त कर गणतंत्र की स्थापना की। अब देश का शासक वर्ग देश के नाम पर नहीं बल्कि जनता के नाम पर शासन करने को ही अधिकृत था। जनता अपने प्रतिनिधि को आकांक्षाओं पर खरा नहीं उतरने पर हटा सकती थी। अब सर्वोच्च सत्ता जनता में निवास करने लगी।

4.मानवाधिकारों की घोषणा

देश में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, कानून के समक्ष समानता, सम्पत्ति की सुरक्षा, योग्यता अनुसार पद, पदों के समान अवसर इत्यादि को मानव अधिकारों के रूप में कानून का आधार देकर स्थापित किया गया। मनुष्य के कुछ अधिकारों को प्राकृतिक अधिकार अर्थात् जन्म से प्राप्त अधिकार की संज्ञा दी गई। इन मानव अधिकारों को प्राकृतिक अधिकारों का ही पर्याय माना गया। उन्हें शासक वर्ग द्वारा भी नहीं छीना जा सकता था। यह अधिकार विश्व के निरंकुश शासकों के विरूद्ध चुनौती के रूप में उभरे।

5.सेकुलर राज्य की घोषणा एवं चर्च के अधिकारों की समाप्ति

प्रत्येक व्यक्ति को उपासना पद्वति चुनने का अधिकार दिया गया। मजहबी सहिष्णुता फ्रांसिसी क्रांति की महत्वपूर्ण देन थी। मजहबी समस्याओं एवं पादरियों को राज्य के नियंत्रण में लाया गया एवं उन्हें भी संविधान के अनुसार कार्य व व्यवहार करने को बाध्य किया गया। मध्यकाल में शासन का मजहब ही जनता का मजहब माना जाता था। सेकुलर राष्ट्र की अवधारणा ने इस नियम को समाप्त कर मजहब को व्यक्तिगत विचारधारा से जोड़ दिया। इसका अर्थ था—शासन की चर्च के हस्तक्षेप से मुक्ति।

चर्च की सम्पत्ति पर जिन किसानों ने अधिकार कर लिया था उन अधिकारों को कानूनी आधार दे किसानों को लाभ दिया गया। मजहब को व्यक्तिगत विषय बना दिया गया।

6.राजनैतिक दलों का गठन

फ्रांसिसी क्रांति में जनता को स्वयं के अधिकारों का ज्ञान हो चुका था। वह अब राजनैतिक अधिकारों से परिचित हो चुकी थी। शासन करने का दैवीय सिद्धांत अर्थात् राजा ईश्वर का प्रतिनिधि है इस कारण उसे शासन करने का अधिकार है, उसे अब समाप्त कर दिया गया। शासन की बागडोर जनता के हाथ में आ गई। जनता अपने सामूहिक हितों के लिए दलों या संगठन के रूप में एकत्रित हो संघर्ष करने लगी। इस कड़ी में जिरोंदिस्त व जैकोबिन दल प्रमुख थे। शासन की सम्प्रभुता जनता में निहित हो गई।

7. समाजवाद का प्रारम्भ

क्रांतिकाल में कुलीन वर्ग, सामन्त वर्ग एवं पादरियों के विशेषाधिकारों को समाप्त कर दिया गया। चर्च की सम्पत्ति पर किसानों को अधिकार दे दिया। समानता के सिद्धांत पर सामन्त व्यवस्था का अन्त कर किसानों व सामन्तों के लिए एक समान कानून व्यवस्था स्थापित की गई। अधिकारविहीन समाज व विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग को बराबर खड़ा कर दिया गया। जैकोबिन दल मजदूरों और निर्धनों का हिमायती था।

8.शिक्षा सम्बन्धी सुधार

शिक्षा को चर्च से अलग कर उसके नियंत्रण से मुक्त कर दिया गया। शिक्षा के मजहबी स्वरूप को बदल कर मानवतावादी बनाने का प्रयास किया गया। शिक्षा में अनुशासन व राष्ट्रीयता को विशेष महत्व देने का प्रयास किया गया।

9.स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व

फ्रांस की क्रांति का यह सबसे प्रभावित करने वाला परिणाम था। स्वतंत्रता, समानता एवं बन्धुत्व के नारे ने न केवल फ्रांस बल्कि सम्पूर्ण यूरोप को प्रभावित किया। भाषण व लेखन, सम्पत्ति के अधिकार की सुरक्षा, राजनैतिक दलों के गठन की आजादी, समान अवसर, योग्यता को महत्व, विधि के समक्ष समानता इत्यादि को स्थापित किया गया। जनता के बीच भाईचारे व सहयोग की भावना से राष्ट्रीयता की नींव को मजबूत किया गया।

.10. उदारवादी प्रजातंत्र का प्रारम्भ

उदारवाद के लिए प्रयुक्त अंग्रेजी का ''लिबरल'' शब्द लैटिन भाषा के ''लिबर'' से व्युत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ होता है ''स्वतंत्रता''। फ्रांस में उदारवाद की विचारधारा ने उस शासक वर्ग का समर्थन करने की बात कही जो जनता की सहमति से बनी हो तथा कानून के समक्ष सभी व्यक्ति समान ष्समझे जाए। उदारवाद की विचारधारा ने चूंकि विशेषाधिकारों के अन्त का समर्थन एवं निरकुंश शासन का विरोध किया था, अतः अब उदारवाद को संसदीय प्रजातांत्रिक सरकार का समानार्थी माना जाने लगा। फ्रांस ने यूरोप में उदारवादी लोकतंत्र का झण्डा बुलन्द किया। यह उदारवाद का राजनीतिक पक्ष था। दूसरी ओर, राज्य के नियंत्रण से मुक्त, आर्थिक क्षेत्र में उदारवाद ने मुक्त बाजार व अबाध आवागमन की मांग प्रारम्भ करने वाले मध्यम वर्ग में स्थान बना लिया।

11. राजतंत्र की समाप्ति व जनता की शक्ति का उदय

फ्रांसिसी क्रांति ने देश का भविष्य और वर्तमान दोनों ही जनता में निहित कर दिए थे। फ्रांसिसी क्रांतिकारियों ने यूरोप के समस्त निरकुंश शासकों के विरूद्ध वहाँ की जनता को संगठित होने में मदद देने की बात कही यह राष्ट्रों का भौगोलिक परिदृश्य बदलने का प्रारम्भ बिन्दु था। अब फ्रांस में राष्ट्र की प्रभुसत्ता शासक या राजतंत्र से बाहर फ्रांस के सक्रिय नागरिकों के समूह में निहित हो गई। फ्रांस में एक नया फ्रांसिसी झण्डा तिरंगा चुना गया। एस्टेट्स जनरल असेम्बली का स्थान नेशनल असेम्बली ने ले लिया जो सक्रिय नागरिकों का प्रतिनिधित्व करती थी। सेना अब राजा की रक्षा के लिए नहीं होकर देश की रक्षा का दायित्व सम्भालने वाली थी। जनता में देश के लिए शहीद होने वालों के प्रति सम्मान की भावना पैदा हुई। यूरोपीय राजनीति में राष्ट्रवाद का प्रारम्भ 1789 ईस्वी की इसी फ्रांसिसी क्रांति से माना जाता है।

फ्रांसिसी क्रांति का महिलाओं पर प्रभाव

फ्रांसिसी क्रांति के दौरान लड़कियों के लिए सरकारी विद्यालयों के द्वार खोल दिए गए तथा उन्हें व्यवसायिक प्रशिक्षण लेने का अधिकार दिया गया। उनकी मर्जी के बिना विवाह नहीं करवाने को कानूनी आधार दे दिया गया था। तलाक प्राप्त करने हेतु प्रार्थना–पत्र देने का अधिकार स्त्रियों को भी पुरूषों के समान ही प्रदान किया गया।

स्त्री स्वातंत्र्य का यह संक्रमण काल था यही कारण है कि फ्रांसिसी क्रांति के आदर्शों स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व के विपरीत महिला क्लबों को आतंक के शासन के दौरान बंद कर दिया गया। इसका विरोध करने पर ''ओलम्प दे गूज'' नामक महिला को देशद्रोह का आरोप लगा उसे फांसी पर चढ़ा दिया गया। इसके पूर्व 1791 ईस्वी के संविधान में महिलाओं को निष्क्रिय नागरिक का दर्जा दिया गया था। निष्क्रिय नागरिक को मत देने का अधिकार नहीं था।

दूसरी ओर फ्रांसिसी कलाकारों ने अपने क्रांति के आदर्शों जैसे स्वतंत्रता, समानता, न्याय, गणतंत्र इत्यादि का मानवीकरण कर उसका नारी रूप में सृजन प्रारम्भ कर दिया। न्याय तथा कानून के समक्ष सभी की समानता को एक तराजू पकड़े आँखों पर पट्टी बांधे स्त्री के रूप में दर्शाया गया। स्वतंत्रता को टूटी जंजीर के रूप में व्यक्त किया गया। गणतंत्र एवं स्वतंत्रता के प्रतीक लाल टोपी, तिरंगा और कलगी बने। फ्रांस में ऐसी नारी के रूपक को मारीआन नाम दिया गया। राष्ट्र के अमूर्त विचारों को नारी की छवि में दर्शाया गया।

चित्र–4.14 : स्वतंत्रता की प्रतीक नारी रूपक एवं लाल टोपी

फ्रांसिसी क्रांति

	महत्त्वपूर्ण घटनाक्रम		दिनांक
1.	स्टेट्स जनरल की शुरूआत	–	5 मई 1789 ईस्वी
2.	जनसाधारण वर्ग/तृतीय सदन द्वारा नेशनल असेम्बली/राष्ट्रीय सभा की घोषणा	–	17 जून 1789 ईस्वी
3.	टेनिस कोर्ट की शपथ	–	20 जून 1789 ईस्वी
4.	राष्ट्रीय सभा को राजा की स्वीकृति एवं राष्ट्रीय सभा का संविधान सभा में परिवर्तन	–	27 जून 1789 ईस्वी
5.	बास्तील दुर्ग का पतन	–	14 जुलाई 1789 ईस्वी (उक्त दिनांक को फ्रांस का स्वतंत्रता दिवस मनाया जाता है)
6.	विशेषाधिकारों का अन्त	–	4 अगस्त 1789 ईस्वी
7.	मानव अधिकारों की घोषणा	–	27 अगस्त 1789 ईस्वी
8.	मार्च ऑफ वूमेन (स्त्रियों का अभियान)	–	5 अक्टूबर 1789 ईस्वी
9.	बुन्सविक की घोषणा	–	जुलाई 1791 ईस्वी
10.	संविधान सभा द्वारा लिखित गणतंत्रीय संविधान का निर्माण	–	सितम्बर 1791 ईस्वी
11.	राजतंत्र की समाप्ति व गणतंत्र की घोषणा	–	21 सितम्बर 1792 ईस्वी
12.	लुई 16वें को गिलोटीन पर चढ़ाना	–	21 जनवरी 1793 ईस्वी
13.	सितम्बर हत्याकाण्ड	–	2–6 सितम्बर 1793 ईस्वी
14.	आतंक का शासन	–	मार्च 1793 से जुलाई 1794 ईस्वी
15.	दांते का पतन	–	अप्रेल 1794 ईस्वी
16.	राब्सपीयर का पतन	–	28 जुलाई 1794 ईस्वी
17.	नेशनल कन्वेंशन	–	1792 से 1795 ईस्वी
18.	डायरेक्टरी शासन	–	1795 से 1799 ईस्वी

नेपोलियन बोनापार्ट

नेपोलियन का जन्म 15 अगस्त 1769 ईस्वी को कोर्सिका द्वीप पर अजासियो नामक नगर में हुआ था। उसके पिता कार्लो बोनापार्ट एवं माता लीतिशिया रेमालिनो थी। नेपोलियन के पिता फ्रेंच दरबार में कार्सिका द्वीप का प्रतिनिधित्व करते थे। नेपोलियन ने अपनी शिक्षा पेरिस के सैनिक स्कूल में प्राप्त की थी। शीघ्र ही उसे सेना में लेफ्टिनेंट का पद प्राप्त हो गया। नेपोलियन द्वारा 16 सितम्बर 1793 ईस्वी को तूलो के बन्दरगाह से अंग्रेजों को बाहर निकाल दिया गया। राष्ट्रीय महासभा का अधिवेशन भी इसी नगर में हो रहा था। नेपोलियन ने प्रतिक्रियावादी तत्त्वों से महासभा के सदस्यों की रक्षा की। इस समय नेपोलियन ने अपनी योग्यता, कुशलता व साहस का परिचय दिया। इसी कारण 1794 ईस्वी में उसे सेना में प्रधान तोपची नियुक्त कर दिया गया। 5 अक्टूबर 1795 ईस्वी को डायरेक्टरी शासन में राजतंत्र के समर्थकों द्वारा विद्रोह कर दिया गया। नेपोलियन ने उनके विद्रोह को दबाने में फ्रांस के सेनापति बरास की मदद की। इस विद्रोह पर विजय के कारण उसे आन्तरिक सेना का जनरल नियुक्त किया गया। इसी समय उसका विवाह जोसेफाइन बौहारनैंस नामक प्रभावशाली महिला से हो गया। फ्रांस के युद्ध मंत्री कार्नो द्वारा, नेपोलियन की योग्यता से प्रभावित होकर इटली विजय का अभियान सौंप दिया गया।

नेपोलियन ने लोधी के पूल व रिवोली के युद्ध में जनवरी 1797 ईस्वी में आस्ट्रिया को पराजित किया। उसने 18 अप्रेल 1797 ईस्वी को लियोबेन की विराम संधि की। 17 अक्टुबर 1797 को आस्ट्रिया ने कैम्पोफोर्मिया की संधि की। इस संधि ने इटली में फ्रांस को सर्वोच्च बना दिया। अब नेपोलियन की वीरता, कुशलता व रणनीति को लेकर फ्रांस में किंवदंतियाँ बनने लगी।

नेपोलियन ने मिश्र को युद्ध में परास्त करने के पश्चात् इग्लैण्ड के उपनिवेश भारत में, मराठों को सहयोग कर इंगलैण्ड पर विजय की योजना बना ली थी, मगर अगस्त 1798 ईस्वी में नील नदी के युद्ध में नेपोलियन को इग्लैण्ड की जलसेना के सेनापति नेल्सन ने हरा दिया। उधर डायरेक्टरी का शासन फ्रांस में कुशासन के कारण लोकप्रिय नहीं रहा था। नेपोलियन की विजय डायरेक्टरी की अयोग्यता के कारण पुनः हार में बदल रही थी। फलतः नेपोलियन ने फ्राँस पहुँचने का निर्णय किया। नेपोलियन ने फ्रांस पहुंचते ही अनुभव किया कि वह सही समय पर आया है। उसने कहा ''प्रत्येक व्यक्ति मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। यदि मैं कुछ समय पूर्व आता तो शीघ्रता होती, यदि कुछ समय बाद आता तो देर हो जाती। मैं ठीक समय पर आया हूँ। अब नाशपाति पक चुकी है।'' उसने डायरेक्टरी व्यवस्था को समाप्त कर दिया, जिनकी भ्रष्टता से फ्रांसिसी जनता परेशान थी। अब शासन शक्ति तीन कौंसलों को सौंप दी गई।

चित्र–4.15 : नेपोलियन बोनापार्ट

नेपोलियन स्वयं प्रधान कौंसिल बना। इन कौंसलों को निम्नलिखित कार्य करने थे–

1. फ्रांस में शांति व्यवस्था की स्थापना।
2. नई विधि संहिता युक्त संविधान का निर्माण।
3. यूरोपीय देशों के साथ शांति संधि करना।

इन कौंसुलों ने क्रांतिकाल का चौथा संविधान बनाया, जिसमें शासन की कार्यपालिका शक्ति तीन निर्वाचित कौंसुलों को सौंप दी। जिनका कार्यकाल दस वर्ष निश्चित किया गया। नेपोलियन प्रथम कौंसल, कैम्बेसरी द्वितीय कौंसल तथा लैब्रून तीसरा कौंसल बना। यद्यपि गणतंत्र का दिखावा किया जा रहा था लेकिन वास्तविक शक्ति नेपोलियन के हाथ में थी। वही अप्रत्यक्ष रूप से शासक था।

नेपोलियन को 1802 ईस्वी में उसके सम्पूर्ण जीवन के लिए कौंसल नियुक्त कर दिया गया। 2 दिसम्बर 1804 ईस्वी को नौत्रेदामे चर्च में नेपोलियन को फ्रांस का सम्राट बना दिया गया।

नेपोलियन के फ्रांस के सम्राट बनने के पश्चात् अन्य देशों से किये गए युद्ध :–

21 अक्टूबर 1805 ईस्वी को ट्राफ्लगर के युद्ध में इग्लैण्ड के सेनानायक नेल्सन ने नौसैनिक के युद्ध में नेपोलियन को पराजित कर दिया। यद्यपि इसमें नेल्सन मारा गया, लेकिन इस निर्णायक युद्ध ने नेपोलियन की समुद्र में इग्लैण्ड को पराजित करने की, योजना को सदैव के लिए समाप्त करवा दिया।

2 दिसम्बर 1805 ईस्वी को आस्ट्रलिज के युद्ध में नेपोलियन ने आस्ट्रिया व प्रशा की संयुक्त सेना को पराजित कर दिया। फ्रांस व आस्ट्रिया–प्रशा के मध्य प्रेसबर्ग की संधि हुई। इस संधि में आस्ट्रिया को बहुत अपमानित होना पड़ा। नेपोलियन ने इस संधि के माध्यम से जर्मनी व छोटे–छोटे राज्यों को मिला राइन संघ का निर्माण किया। इस नये जर्मन संघ ने नेपोलियन को अपना संरक्षक बना लिया। अब नेपोलियन "राजाओं का निर्माता" कहलाने लगा। इस संधि के माध्यम से नेपोलियन ने आस्ट्रिया के सम्राट फ्रांसिस को "पवित्र रोमन सम्राट" का पद त्यागने को मजबूर कर दिया।

इस राइन संघ के निर्माण ने प्रशा को नाराज कर दिया। 14 अक्टूबर 1806 ईस्वी को जैना और ओरेस्टेड के युद्ध में फ्रांस ने प्रशा को पराजित कर दिया। फलस्वरूप फ्रांस व प्रशा में राइन नामक संधि हुई। अब नेपोलियन ने रूस पर आक्रमण कर उसे पराजित करने की ठान ली। 14 जून 1860 ईस्वी को फ्रीडलैण्ड के युद्ध में रूस पराजित हुआ। 8 जुलाई 1807 ईस्वी को रूस व फ्रांस के मध्य टिलसिट की संधि हुई। इस संधि में रूस ने राइन संघ को मान्यता दे दी। साथ ही इग्लैण्ड से व्यापार नहीं करने पर अपनी सहमति दे दी।

इस संधि के समय नेपोलियन अपने विजय–शिखर के उच्चतम बिन्दु को प्राप्त कर चुका था। इग्लैण्ड को छोड़ प्रत्येक यूरोपीय देश उसके अधीन था।

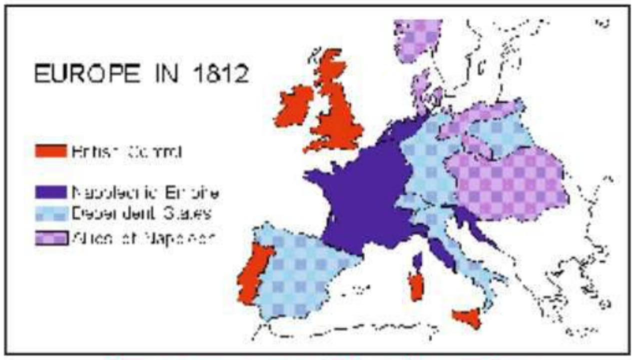

चित्र–4.17 : 1812 ईस्वी यूरोप मानचित्र

शासन व्यवस्था

नेपोलियन द्वारा विद्रोही पादरियों, सामन्तों और कुलीनों को पुनः फ्रांस में आमन्त्रित कर उन्हें वहाँ बसा दिया गया। सरकारी सेवाओं को सभी वर्गो के लिए खोल दिया गया।

प्रशासनिक सुधार

फ्रांस को विभागों (जिला), विभागों को उपविभागो (एरोण्डिजमेंट) में बाटा गया। नेपोलियन द्वारा इन जिलों में सैनिक अधिकारियों को नियुक्त कर दिया गया।

आर्थिक सुधार

1800 ईस्वी में बैंक ऑफ फ्रांस की स्थापना कर दी गई। शराब, नमक, तम्बाकू पर कर बढाया गया। खाद्य सामग्री का वितरण एवं यातायात व्यवस्था सुचारू की गई। करों की वसूली सरकारी कर्मचारियों के माध्यम से की जाने लगी।

पोप के साथ समझौता

कोंकोर्दा की संधि 1801 ईस्वी

1.चर्च को राज्य के नियन्त्रण में माना गया। पादरियों को राज्य के वेतनभोगी कर्मचारी बना दिया गया। यद्यपि पादरियों की नियुक्ति पोप द्वारा की जानी थी मगर पादरियों की नियुक्ति संबंधी प्रस्ताव भेजने का अधिकार सरकार के पास था।

2.क्रांतिकाल में किसानों द्वारा हड़पी गई चर्च की सम्पत्ति व जमीन पर किसानों का ही अधिकार माना गया।

3.संविधान के प्रति सम्मान व उसके अनुसार शपथ लेने पर पादरियों को जेल से मुक्त कर दिया गया।

4.कैथोलिक मजहब को फ्रांस का मुख्य मजहब घोषित किया गया।

नेपोलियन ने मजहब का उपयोग सत्ता बनाए रखने के लिए किया। उसके शब्दों में "मैं मिश्र में मुस्लिम हूँ और फ्रांस में कैथोलिक।"

नेपोलियन द्वारा किये गये महत्वपूर्ण सुधार

1.शिक्षा संबंधी सुधार

नेपोलियन जानता था कि क्रान्ति की शुरूआत बौद्धिक वर्ग से होती है। अतः उसने विश्वविद्यालयों के अधिकारियों व प्राध्यापकों की नियुक्ति का कार्य स्वयं के हाथ में रखा। व्यवसायिक शिक्षा को भी महत्व दिया गया। शिक्षक सरकारी कर्मचारी बन नेपोलियन की नीतियाँ पढ़ाने लगे। शिक्षा को प्राथमिक, माध्यमिक व उच्च शिक्षा (विश्वविद्यालय) में विभाजित किया गया। मजहब को शिक्षा से अलग कर दिया गया। चर्च का नियन्त्रण शिक्षा पर से समाप्त कर दिया गया। पाठ्यक्रम में पारिवारिक अनुशासन व सैनिक शिक्षा को शामिल किया गया। माध्यमिक स्तर पर लाइसी नामक विद्यालय एवं शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु नार्मल विद्यालय खोले गए।

2.विधि संहिता

1.नेपोलियन द्वारा समस्त असंगत व असंख्य कानूनों को समाप्त कर उन्हें फ्रांस की व्यवस्था के अनुकूल बनाया गया। इन कानूनों को बनाते समय समानता, मजहब, सहिष्णुता, नैतिकता, संयुक्त परिवार व्यवस्था, अनुशासन, देशभक्ति, सम्पत्ति का व्यक्तिगत अधिकार इत्यादि को महत्व दिया गया।

2.पादरी वर्ग के प्रभाव को दूर करने हेतु सिविल मैरिज और तलाक को मान्यता दे दी गई।

3.नेपोलियन संयुक्त परिवार प्रथा में पिता को सर्वप्रमुख स्थान देता था। परिवार में स्त्रियों व पुत्रों की स्थिति पुरूष मुखिया से नीचे थी। मुखिया पुरूष परिवार की समस्त सम्पत्ति का मालिक था। वह बिना किसी की सलाह के उसका विक्रय कर सकता था। नेपोलियन ने पारिवारिक अनुशासन व्यवस्था पर भी जोर दिया।

4.कानून का शासन, योग्यता के अनुसार पद, कानून के समक्ष समानता इत्यादि को फ्रांस में लागू किया गया।

5.कानूनों को क्रमबद्ध कर संहिताबद्ध कर दिया गया।

6.नेपोलियन ने सम्पत्ति के व्यक्तिगत अधिकार को मान्यता देते हुए किसानों को भूमि का मालिक बना दिया। इन सबके विपरीत उसने मजदूरों की तुलना में कम्पनी मालिकों को महत्व दिया था। वह वाणिज्यवादी व पूंजीवादी व्यवस्था का पोषक था एवं उसने इस व्यवस्था को प्रोत्साहित किया। इस कारण उसकी विधि संहिता में मजदूरों के अधिकारों को मान्यता नहीं दे समानता के अधिकार का मखौल बनाया गया। उसके द्वारा मजदूर संघ बनाने पर रोक लगा दी गई थी व मजदूरों के विपरीत मालिकों का पक्ष लेने का आदेश न्यायालयों को दिया गया। यह समानता के सिद्धान्त के विपरीत था बावजूद इसके नेपोलियन को दूसरा "जस्टीनियन" कहा जाता है। नेपोलियन ने स्वयं अपनी विजय से ज्यादा विधि संहिता को महत्वपूर्ण बताया था।

महाद्वीपीय व्यवस्था

नेपोलियन इग्लैण्ड को व्यापारियों का देश मानता था। नेपोलियन प्रत्यक्ष युद्धों में इग्लैण्ड से हार चुका था। अतः उसने इग्लैण्ड की असली शक्ति व्यापार–वाणिज्य को नष्ट कर उसे अप्रत्यक्ष युद्ध में हराने की प्रतिज्ञा कर ली। 1806 ईस्वी में बर्लिन आज्ञाप्ति द्वारा इग्लैण्ड की नाकेबन्दी कर दी गई। इग्लैण्ड के साथ अन्य यूरोपीय देशों का भी व्यापार अवैध घोषित कर दिया गया। इसको "महाद्वीपीय व्यवस्था" कहते है। दूसरी ओर इग्लैण्ड ने भी "ऑर्डर इन कोन्सिल" पास कर दिया। उसने नेपोलियन के पक्षधर देशों की नाकेबन्दी, जहाजों को पकड़ने व उन्हें नष्ट करने का आदेश दे दिया। महाद्वीपीय व्यवस्था फ्रांस के लिए घातक सिद्ध हुई। यह आत्महत्या के समान था। फ्रांस को यूरोप के व्यापार का केन्द्र बनाने का प्रयास घातक सिद्ध हुआ। महाद्वीपीय व्यवस्था को प्रभावी रूप से लागू करने के लिए नेपोलियन को और नये प्रदेशों पर विजय प्राप्त करने को बाध्य कर दिया। इसने फ्रांस की आर्थिक स्थिति पर घातक प्रभाव पड़ा।

स्पेन पर अनाधिकृत कब्जा

नेपोलियन बूर्बो वंश को पूर्ण रूप से समाप्त करना चाहता था। फ्रांस के अलावा स्पेन में बूर्बो वंश का शासक चार्ल्स चतुर्थ शासन कर रहा था। यद्यपि स्पेन नेपोलियन के युद्धों में तन–मन तथा धन से सहयोगी रहा था, तथापि नेपोलियन ने स्पेन के शासक को पद से हटा अपने भाई जोसेफ बोनापार्ट को स्पेन का सम्राट बना दिया। इस कुकृत्य ने स्पेन में राष्ट्रीयता की भावना फैला दी। यूरोप के अन्य देशों ने इस संघर्ष में नेपोलियन के विरूद्ध स्पेन का साथ दिया।

ग्राण्ट एवं टेम्परले ने कहा कि "स्पेन के युद्ध ने कैंसर के समान नेपोलियन की शक्ति को पी लिया था।" स्वयं नेपोलियन ने कहा " स्पेन के नासूर ने मुझे तबाह कर दिया।" इस प्रकार नेपोलियन का विरोध रूस, आस्ट्रिया, स्पेन, प्रशा पुर्तगाल, स्वीडन इत्यादि देशों में मात्र राजनैतिक नहीं था। भावनात्मक स्तर पर इन देशों की जनता ने नेपोलियन द्वारा हराये गए शासकों को समर्थन देना प्रारम्भ कर दिया। इन देशों के निवासी राष्ट्रीय भावना से प्रेरित हो नेपोलियन के विरूद्ध एक होकर संघर्ष करने लगे।

मास्को युद्ध

महाद्वीपीय व्यवस्था ने रूस को फ्रांस का विरोधी बना दिया। फ्रांसीसी क्रांति के प्रभाव के कारण रूस में सामन्तों का प्रभाव क्षेत्र कम हो गया था। महाद्वीपीय व्यवस्था के कारण व्यापार व सामन्तों के आमोद–प्रमोद की सामग्री में कमी आ गई थी रूस का सम्राट अलेक्जेण्डर भी पोलैण्ड को लेकर फ्रांस से शंकित था। रूस ने महाद्वीपीय व्यवस्था को जारी रखने से इन्कार कर दिया। परिणामस्वरुप फ्रांस ने रूस पर आक्रमण कर दिया। लेकिन रूस की सर्दी से फ्रांसिसी सैनिक लाखों की संख्या में मारे गए। नेपोलियन का मास्को अभियान असफल रहा।

फिशर की मान्यता है कि "मास्को अभियान दो राष्ट्रों के बीच संघर्ष नहीं था बल्कि वो तो एक महत्वाकांक्षी व्यक्ति और एक महान मजहब परस्त जाति की राष्ट्रीय भावना के बीच का संघर्ष था।"

राष्ट्रों का युद्ध (लिप्जिग युद्ध) अक्टूबर 1813 ईस्वी

स्वीडन, प्रशा, आस्ट्रिया, इंग्लैण्ड तथा रूस ने मिलकर नेपोलियन को हराने हेतु चौथे गुट का निर्माण कर लिया। नेपोलियन ने 1813 ईस्वी में डेस्डन के युद्ध में आस्ट्रिया के विरूद्ध अपनी अंतिम विजय प्राप्त कर ली। लेकिन मित्र राष्ट्रों की सेना ने 16 अक्टूबर से 19 अक्टूबर के बीच लिप्जिग के निकट 'राष्ट्रों के युद्ध' में नेपोलियन को परास्त कर दिया। इस युद्ध में नेपोलियन की सैनिक शक्ति नष्ट हो गई। 1 मार्च 1814 ईस्वी को मित्र राष्ट्रों ने युद्ध जारी रखने तथा शत्रु के खात्मे के लिए आपस में शॉमने की संधि की। महाद्वीपीय व्यवस्था समाप्त कर दी गई। अंततः मित्र राष्ट्रों की सेना ने फ्रांस की सेना को परास्त कर मार्च 1814 ईस्वी में फाउन्टेनब्ल्यू नामक स्थान पर नेपोलियन से संधि की। नेपोलियन को सिंहासन से हटा दिया गया एवं उसे एल्बा द्वीप का शासक बनाकर वहाँ भेज दिया गया। साथ ही उसे 20 लाख फ्रेंक वार्षिक पेंशन देना निश्चित कर दिया।

वाटरलू का युद्ध :– 30 मार्च, 1815 ईस्वी को नेपोलियन एल्बाद्वीप से भागकर पेरिस पहुँच गया तथा पुनः फ्रांस का सम्राट बन बैठा। यद्यपि नेपोलियन ने यह घोषणा की कि वह शांति और स्वतंत्रता का मार्ग अपनाना चाहता है, लेकिन यूरोपीय राष्ट्रों ने उस पर विश्वास नहीं किया। मित्र देशों की संयुक्त सेना को फ्रांस भेजा गया। 18 जून 1815 ईस्वी को नेपोलियन परास्त हुआ। 15 जुलाई 1815 ईस्वी को अंग्रेजी नौ सैन्य अधिकारी मेटलेण्ड के समक्ष नेपोलियन ने आत्मसमर्पण कर दिया। उसे पहले इंग्लैण्ड ले जाया गया। वहाँ से उसे सेण्ट हेलेना द्वीप में कैद कर दिया गया। 6 वर्ष तक उदर रोग से ग्रस्त कष्ट पाते हुये 5 मई 1821 ईस्वी को उसकी मृत्यु हो गई। 20 वर्ष पश्चात् उसके अवशेष फ्रांस लाये गए जिन्हें पूर्ण सम्मान सहित पेरिस में दफनाया गया।

चित्र–4.18 : मास्को अभियान

नेपोलियन के पतन के प्रमुख कारण

1.प्रायद्वीपीय युद्ध या स्पेनिश वार –

नेपोलियन के द्वारा स्पेन पर अधिकार करना उसके लिए घातक सिद्ध हुआ। इस घटना ने समस्त यूरोप को एक होने का अवसर प्रदान कर दिया। स्पेन में इस घटना का तीव्र विरोध हुआ साथ ही एक राष्ट्रीयता की लहर उठी एवं मित्र राष्ट्रों ने स्पेन की सहायतार्थ एक संयुक्त मोर्चा तैयार कर दिया। इस प्रायद्वीपीय युद्ध में फ्रांस ने तीन लाख सैनिक खो दिए।

2. महाद्वीपीय व्यवस्था –

नेपोलियन के विश्व विजेता बनने में इग्लैण्ड ही एकमात्र रोड़ा था। नेपोलियन ने इग्लैण्ड के अलावा समस्त यूरोप को जीत लिया था। वह जानता था कि इग्लैण्ड को सीधे युद्ध में नहीं हराया जा सकता है। अतः उसने इग्लैण्ड की वास्तविक शक्ति, व्यापार पर प्रहार करने का प्रयास किया। महाद्वीपीय व्यवस्था के माध्यम से उसने इग्लैण्ड के साथ अन्य देशों के व्यापारिक सम्बन्धों को बनाए रखने पर नाकेबन्दी द्वारा रोक लगा दी। इस व्यवस्था ने पूरे यूरोप में वस्तुओं की कीमतों में भारी वृद्धि कर दी। साथ ही वस्तुओं का अभाव हो गया। रूस, जो कि नेपोलियन के साथ मित्रवत था, वो भी इस महाद्वीपीय व्यवस्था के विरूद्ध हो गया। इस प्रकार नेपोलियन ने रूस की मित्रता भी खो दी।

3.रूस के विरूद्ध अभियान

नेपोलियन का रूस पर आक्रमण करना घातक सिद्ध हुआ। इस युद्ध में उसके 5 लाख सैनिक मारे गए। रूसियों की छापामार रणनीति, संघर्ष की जुझारू प्रवृति तथा दुर्गम मार्ग नेपोलियन की सेना के लिए काल साबित हुए। ऐसा कहा जाता है कि "रूस की सर्दियाँ कभी नहीं हारती", यह तथ्य नेपोलियन के रूस अभियान पर सही साबित होता है। नेपोलियन के सैनिक रूस की भयंकर शीत को नहीं झेल सके एवं मारे गए। साथ ही लौटती फ्रांसिसी सेना पर रूसियों ने आक्रमण कर उसे बड़ा नुकसान पहुँचाया।

4. पोप का अपमान

नेत्रोदम के चर्च में नेपोलियन के राज्याभिषेक पर नेपोलियन ने पोप को आमंत्रित कर उसका अपमान कर दिया। जब पोप नेपोलियन को ताज पहनाने जा रहा था तब नेपोलियन ने ताज को स्वयं के हाथों में लेकर उसे सिर पर धारण कर लिया और ये शब्द कहे कि, "यह ताज मुझे धूल में पड़ा मिला जिसे मैंने तलवार की नोक पर उठाया है।"

ये पोप का अपमान था इस कारण समस्त यूरोपीय कैथोलिक मतावलम्बी उसके विरोधी हो गए।

5. इग्लैण्ड की सुदृढ़ स्थिति एवं सर्वश्रेष्ठ नौसेनिक बेड़ा

इंग्लैण्ड की सुदृढ़ नौसेनिक शक्ति ने नेपोलियन की महाद्वीपीय व्यवस्था को असफल कर दिया। इंग्लैण्ड की आर्थिक स्थिति शुरू से ही अच्छी थी। इसके उलट फ्रांस में ही महाद्वीपीय व्यवस्था का विरोध शुरू हो गया। इस व्यवस्था से वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि हो गई थी। समस्त यूरोप में इंग्लैण्ड का नौसेनिक बेड़ा शक्तिशाली था। इस कारण नेपोलियन उससे नील नदी के युद्ध में हार गया था। इस ताकत के बल पर इग्लैण्ड ने नेपोलियन की महाद्वीपीय व्यवस्था को असफल कर दिया।

6. बलात सैनिक भर्ती (राष्ट्रीय चरित्र का समाप्त होना)

नेपोलियन की सेना में अधिकांश सैनिक अलग–अलग देशों से भिन्न–भिन्न राष्ट्रीयता वाले बलात् भर्ती किए गए थे। फ्रांस के क्रांतिकाल में जो राष्ट्रीयता की पहचान सेना में थी वह अब समाप्त हो चुकी थी। अतः यह भी एक प्रमुख कारण था जो सेना को लम्बे व थका देने वाले युद्ध में उदासीन बनाए हुए था।

7. राष्ट्रीयता की भावना का उठना

स्पेन से उठी राष्ट्रीयता की भावना ने समस्त यूरोप को नेपोलियन के विरूद्ध एक होकर संघर्ष करने को प्रेरित कर दिया। प्रत्येक राष्ट्र नेपोलियन से बदला लेने को तैयार हो उठा। वे राष्ट्र की विजय व सुरक्षा हेतु सर्वस्व न्यौछावर करने को तैयार हो गए।

8. संबंधियों के प्रति प्रेम:–

नेपोलियन का अपने भाइयों एवं सगे–संबंधियों के प्रति विशेष मोह था। उसने एक भाई लुई नेपोलियन को हॉलैण्ड तथा दूसरे भाई जोसेफ को स्पेन तथा तीसरे भाई जोरेम को वेस्टफेलिया का शासक बनाया। अपनी बहन कैरोलिन का विवाह अपने सेनापति मुरा के साथ कर दिया। इतने अनुग्रह के बावजूद भी इन भाइयों ने विपदा में नेपोलियन का साथ नहीं दिया।

9. युद्धों की लम्बी व लगातार चली श्रृंखला :–

कुछ इतिहासकारों ने विश्व विजेता बनने के लिए नेपोलियन द्वारा प्रारम्भ की गई युद्धों हेतु लम्बी यात्राओं को उसके सैनिकों और स्वयं उसका थका देने वाला बताया था। डा0 स्लोअने ने लिखा है कि ''नेपोलियन के पतन के सभी कारण थकान में निहित थे।'' जिन युद्धों ने उसे यूरोपीय महाद्वीप में विजेता बनाया एवं साम्राज्य का निर्माण किया उन्हीं युद्धों ने उसका विनाश कर दिया।

10.स्वभावगत दोष :–

नेपोलियन एक जिद्दी स्वभाव का महत्वाकांक्षी शासक था। सम्राट बनने के पश्चात् उसने अपने हितैषी सलाहकारों से राय लेना भी बन्द कर दिया था। वह स्वयं द्वारा लिए गए निर्णयों को ही सर्वश्रेष्ठ मानने लगा। उन निर्णयों के विपरित किसी भी तरह की सलाह को वो स्वीकार नहीं करता था।

11.अधिनायकवादी सत्ता :–

नेपोलियन ने गणतन्त्र का गला घोंट निरकुंश राजतन्त्र को पुनः प्रारम्भ कर दिया। उसने समाचार–पत्रों पर कठोर नियन्त्रण लगा दिया। मजदूर संघटनों के बनने पर रोक लगा दी गई। उसने उस स्वतंत्रता का गला घोंट दिया जो फ्रांसिसी क्रांति से उद्भूत थी। क्रांतिकारी विचारधारा ने जनता के आत्मनिर्णय के अधिकार के सिद्धान्त को जन्म दिया था मगर नेपोलियन ने सम्राट बन निरकुंश राजतन्त्र के माध्यम से जनता के इस अधिकार को भी छीन लिया।

नेपोलियन का मूल्यांकन

"मैं ही क्रांति हूँ मैंने क्रांति का अन्त किया है"

नेपोलियन का उदय उन परिस्थितियों की देन था जो फ्रांस के क्रांतिकाल में उत्पन्न हुई थी। उसने क्रांतिकाल में उद्भूत भावना के अनुसार काम करते हुए सम्राट बनते ही चर्च से शिक्षा व मजहब को अलग कर दिया। चर्च और पादरियों को राज्य के नियंत्रणाधीन ला दिया। नौकरियों में सभी को समानता के सिद्धांत पर समान अवसर दिए। प्रतिभाओं का सम्मान किया गया। कानून की समानता का सिद्धान्त लागू किया। व्यापार व कर प्रणाली में व्यापार उन्मुख सिद्धांत को माना गया। नेपोलियन विधि संहिता में क्रांतिकाल में बने श्रेष्ठ कानूनों को शामिल किया गया। सामन्तवाद की समाप्ति को बनाए रखा।

चित्र 4.19 : नेपोलियन बोनापार्ट समाधि

वह स्वयं सम्राट बन बैठा। जनता की सम्प्रभुता व प्रजातांत्रिक सिद्धांतों को त्याग दिया। नेपोलियन द्वारा साम्राज्यवादी नीति को अपनाया गया। उसने फ्रांसिसी जनता के राजनैतिक अधिकारों को छीन लिया। स्वयं के वैभव प्रदर्शन पर जनता का धन लुटाया गया। स्वयं के समर्थकों को उपाधियाँ तथा सम्मान दे विशेष समर्थक दल बना लिया।

घटना	दिनांक
1. जन्म (नेपोलियन बोनापार्ट)	15 अगस्त 1769 ईस्वी कोर्सिका द्वीप
2. तूलों के बन्दरगाह पर अधिकार	16 सितम्बर 1793 ईस्वी
3. भीड़ से नेशनल कन्वेंशन की रक्षा	5 अक्टूबर 1795 ईस्वी
4. आस्ट्रिया के साथ कैम्पोफोर्मिया की संधि	17 अक्टूबर 1797 ईस्वी
5. नील नदी का युद्ध	अगस्त 1798 ईस्वी
6. पोप के साथ समझौता	1801 ईस्वी
7. राज्याभिषेक	2 दिसम्बर 1804 ईस्वी
8. ट्राफ्लगर युद्ध (इग्लैण्ड व फ्रांस)	21 अक्टूबर 1805 ईस्वी
9. आस्ट्रलिज युद्ध (आस्ट्रिया प्रशा के साथ प्रेसबर्ग सन्धि)	2 दिसम्बर 1805 ईस्वी
10. जैना व आवरस्टेट का युद्ध (प्रशा के साथ, राइन सन्धि)	14 अक्टूबर 1806 ईस्वी
11. महाद्वीपीय व्यवस्था	21 नवम्बर 1806 ईस्वी
12. रूस के साथ युद्ध	14 जून 1807 ईस्वी
13. फ्रीडलैण्ड युद्ध (टिलसिट संधि)	8 जुलाई 1807 ईस्वी
14. ऑर्डर इन कॉन्सिल	1807 ईस्वी
15. स्पेन पर आक्रमण	1808 ईस्वी
16. मास्को अभियान	जून 1812 ईस्वी
17. लिपजिंग युद्ध	अक्टूबर 1813 ईस्वी
18. नेपोलियन को हटाना एवं एल्बा द्वीप निर्वासित	11 अप्रेल 1814 ईस्वी
19. वाटरलू युद्ध	18 जून 1815 ईस्वी
20. नेपोलियन की मृत्यु	5 मई 1821 ईस्वी

राष्ट्र की यूरोपीय व भारतीय अवधारणा

राष्ट्र के संबंध में भारत की अवधारणा पाश्चात्य देशों से भिन्न रही है। राष्ट्र शब्द का अर्थ जानने से पूर्व विद्यार्थियों को देश, राज्य व राष्ट्र में सम्बंध व आपस में भिन्नता को समझना आवश्यक होगा।

राष्ट्र, राज्य व देश तीनों के लिए समान आवश्यक तत्व है जन अर्थात् व्यक्तियों का समूह। कोई भी राष्ट्र, राज्य व देश बिना जन के अस्तित्व में नहीं रह सकता है जैसे ग्रीनलैण्ड, यद्यपि उसमें एक निश्चित भू–भाग है लेकिन वहाँ निर्जन होने के कारण उसे राष्ट्र, राज्य तथा देश की संज्ञा व मान्यता नहीं दी जा सकती है। यही तथ्य आर्कटिक व अण्टार्टिका के सम्बन्ध में कहा जा सकता है।

दूसरा तत्व है भूमि : इस सम्बन्ध में विद्वानों के मतों में भिन्नता रही है। पाश्चात्य देश इसे राष्ट्र बनने का अत्यन्त आवश्यक तत्व मानते हैं। इसके विपरीत भारतीय धारणा इसे राज्य व देश का आवश्यक तत्व मानती है। अर्थात् राज्य व देश बनने के लिए भूमि का होना आवश्यक है जिस पर जन निवास करते हों तथा जिन पर शासन किया जा सके। लेकिन भूमि राष्ट्र का अनिवार्य तत्व नहीं हो सकती है। एक राष्ट्रीयता के व्यक्ति अलग–अलग राज्यों व देशों में निवास कर सकते हैं जैसे– अरब देश।

तीसरा तत्व है संप्रभुता अर्थात् बाहरी दवाब व शासन से मुक्त, स्व निर्णय में सक्षम एक स्वतंत्र शासन। यह राज्य का आवश्यक तत्व है। अर्थात् भूमि व सम्प्रभुता दोनों राज्य के आवश्यक तत्व हैं। लेकिन ये देश का आवश्यक तत्व नहीं है, जैसे स्वतंत्रता से पूर्व भारत एक देश था चूंकि उसका एक निश्चित भू–भाग था एवम् उस भू–भाग पर जन निवास करते थे लेकिन वह राज्य नहीं था क्योंकि वह इग्लैण्ड के शासन के अन्तर्गत था। वह सम्प्रभु नहीं था, इसी कारण भारत को स्वतंत्रता से पूर्व एक देश की संज्ञा तो दी जाती थी लेकिन राज्य की संज्ञा नहीं दी जा सकती थी।

चौथा तत्व है संस्कृति – यह देश व राज्य का अनिवार्य तत्व न होकर राष्ट्र का अनिवार्य कारक हैं कोई भी राष्ट्र बिना संस्कृति के अस्तित्व में नहीं रह सकता है। भारत सनातन काल से ही एक राष्ट्र रहा है इसकी एक संस्कृति है जो उत्तर दक्षिण पूर्व व पश्चिम चारों दिशाओं में एक समान रही है। भारत एक विशाल राष्ट्र रहा है। यहाँ के निवासियों पर जलवायु, भौगोलिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। अतः राजस्थान, कश्मीर, आसाम, तमिलनाडु सभी का खान–पान, पहनावा, भाषा इत्यादि का एक होना सम्भव नहीं है। यहाँ प्रशासनिक सुविधा या राजाओं की व्यवस्था के कारण राजनीतिक क्षेत्र भले ही भिन्न रहे हो, लेकिन सांस्कृतिक आचरण में किसी प्रकार की कोई भिन्नता नहीं थी। इसी कारण इनके तीर्थ, आदर्श व्यक्तित्व, पवित्र नदियाँ, ग्रन्थ, त्योहार व पर्व को चारों दिशाओं में समान मान्यता दी गई है। वैदिक काल से भारत में राष्ट्र की अवधारणा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद पर आधारित है।

एक राष्ट्रीयता के दो देश हो सकते हैं, इसी प्रकार भिन्न–भिन्न राष्ट्रीयताओं का एक राज्य हो सकता हैं। जैसे विघटन से पूर्व यूनाइटेड सोवियत सोशलिस्ट रिपब्लिक (USSR) था। उदाहरण स्वरूप–उत्तरी कोरिया व दक्षिणी कोरिया अलग–अलग देश हैं लेकिन उनकी राष्ट्रीयता एक है। यही स्थिति 1991 से पूर्व पूर्वी जर्मनी व पश्चिमी जर्मनी में थी। इनकी राष्ट्रीयता जर्मन थी इसी राष्ट्रीयता ने उन्हें एक होने को प्रेरित किया क्योंकि दोनों देशों की निवासियों की संस्कृति एक है।

द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति से पूर्व विश्व के मानचित्र पर इजराइल नामक देश नहीं था। यहूदी लोग हजारों वर्षो से भिन्न–भिन्न देशों में निर्वासन का जीवन व्यतीत करते आए थे। लेकिन अलग–अलग देशों में रहते हुए भी उन्होंने अपनी सांस्कृतिक पहचान को बनाए रखा। यही संस्कृति उनकी पीढ़ियों को पुनः राष्ट्र में बदलने को प्रेरित कर रही थी। परिणामतः आज इजराइल नामक शक्तिशाली राष्ट्र विश्व मानचित्र पर हम सबके समक्ष है।

इस प्रकार भारतीय अवधारणा में आदर्श राष्ट्र के चार आवश्यक तत्व बताये गए हैं।

1. जन
2. संस्कृति
3. भू–भाग
4. सम्प्रभु शक्ति

इसके विपरीत यूरोपीय समाजशास्त्रियों द्वारा राष्ट्र के जो संघटक गिनाये हैं उसमें संस्कृति को पूर्णतया उपेक्षित कर दिया गया है। वास्तव में राष्ट्र का प्राण संस्कृति ही होती है।

इस सम्बन्ध में मौहम्मद इकबाल की प्रसिद्ध उक्ति याद आती है रोम, मिस्र, यूनान मिट गए जहाँ से, कुछ तो है कि मिटती हस्ती नहीं हमारी। ग्रीस, रोम, मिस्र आदि राष्ट्र समाप्त हुए तो इसका मतलब यह नहीं था कि इन देशों के सभी निवासी नष्ट हो गए या वे भू–भाग नहीं रहे। वहाँ रहने वाले लोग तो जीवित थे मगर विदेशियों ने उनकी संस्कृति नष्ट कर दी। इसी कारण ये राष्ट्र नष्ट हुए कहे जाते हैं यद्यपि इस नाम के देश आज भी मौजूद हैं। लेकिन आज वहाँ भिन्न–भिन्न संस्कृतियों के लोग रहते हैं।

भारतीय अवधारणा के विपरीत पाश्चात्य अवधारणा राजनैतिक आधार लिए हुए है। यूरोपीय विद्वान राष्ट्र हेतु एक समान रिलीजन, भाषा, रेस (नस्ल), आर्थिक सम्बंध इत्यादि को आवश्यक तत्व मानते हैं।

पाश्चात्य अवधारणा के अनुसार यदि रिलीजन राष्ट्र का आधार होता है तो अरब प्रायद्वीप के देश समान मजहब के होते हुए भी भिन्न–भिन्न देशों के रुप में संगठित नहीं हुए होते। यही तथ्य यूरोपीय महाद्वीप के ईसाई देशों के सम्बन्ध में सत्य है। इसी प्रकार भाषा भी वह तत्व नहीं हो सकता जो एक जन – समुदाय को राष्ट्र में परिवर्तित कर दे। कनाडा व अमेरिका समानभाषी पड़ोसी देश हैं फिर भी उन्होंने एक होने की उत्सुकता कभी नहीं दिखाई। विश्व की अधिकांश समस्याएँ राष्ट्र शब्द की गलत अवधारणा से बनी हैं। राष्ट्र शब्द का पर्याय नेशन नहीं है। नेशन के तत्वों में संस्कृति को नकारना, वास्तविकता से दूर होना है। प्रत्येक राष्ट्र की या तो प्राचीन संस्कृति होती है या विकसित करनी पड़ती है जैसे अमेरिका नवीन नेशन–स्टेट है किंतु उसे अपनी राष्ट्रीयता परिभाषित करनी पड़ रही है। हटिण्टन की पुस्तक का नाम ही 'टू आर वी' है। संस्कृति ही वह तत्व है जिसके कारण विश्व के राष्ट्र एक समान रिलिजन के होते हुए भी अलग–अलग देशों के रूप में अस्तित्व बनाए हुए हैं। फ्रांसिसी दार्शनिक ''अर्न्स्ट रेनन'' ने 1882 ईस्वी में स्वयं इस विचारधारा का विरोध किया कि ''राष्ट्र बनने के लिए समान भाषा, जाति, मजहब आवश्यक है। उनके विचार में राष्ट्र एक बड़ी विस्तृत एकता है जो समान इच्छा, समान संकल्प, एक समान कार्य करने की इच्छा एवम् अतीत में समान गौरव अनुभव करने में विद्यमान है। राष्ट्रीयता उस भूमि से सम्बंधित महान् पुरूषों, उनकी वीरता, त्याग, बलिदान एवम् निष्ठा में निहित है जिस पर एक राष्ट्रीय विचार आधारित किया जा सकता है। भारत में कई उपासना पद्धतियाँ हैं लेकिन संस्कृति एक है। इसी कारण भारत एक राष्ट्र है। संस्कृति उस नदी के समान होती है जो समय काल परिस्थितियों से प्रभावित होते हुए भी अपने मूल तत्व व पहचान को बनाए रखती है। जैसे गंगा नदी कई छोटे बड़े नदी नालों व सहायक नदियों से मिलते हुए भी गंगा के रूप में अपनी पहचान अक्षुण्ण बनाए गंगा सागर में मिलती हैं।

> रिलीजन या मजहब – एक संस्थापक, एक पुस्तक, एक पूजा पद्धति।
>
> धर्म – संस्कृत की धृ धातु से उत्पन्न शब्द है जिसका अर्थ 'धारण करना' होता है। किसी व्यक्ति द्वारा धारण करने योग्य जीवन मूल्य जैसे – धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, अपरिग्रह, धी, विद्या, सत्य, अक्रोध आदि तथा व्यक्ति के कर्त्तव्य एवं वस्तुओं के गुण–धर्म सभी इसमें आते हैं। एक परिभाषा के अनुसार इहलौकिकसुख (अभ्युदय) तथा मोक्ष (निःश्रेयस्) की साधना होती है उसे ही धर्म कहा है।

जर्मनी का राजनैतिक एकीकरण

जर्मनी नामक देश का उदय राष्ट्रीयता की उस भावना का उदाहरण है जो फ्रांसिसी क्रांति और नेपालियन की विजय यात्रा के बाद यूरोपियन देशों में बह रही थी। जर्मनी के निर्माण में सर्वाधिक योगदान नेपोलियन की विजय यात्रा को ही दिया जाता रहा है। लिप्सन के अनुसार आधुनिक जर्मनी का जन्मदाता नेपोलियन ही था।

नेपोलियन की विजय से पूर्व जर्मनी 18 वीं सदी के अन्त में 300 से अधिक छोटी–बड़ी रियासतों में बंटा हुआ था। नेपोलियन ने इनको जीत कर वियना कांग्रेस में 39 राज्यों के परिसंघ राइन संघ में बदल दिया। इस संघ में प्रशा राज्य आकार व सैनिक दृष्टि से सबसे बड़ा राज्य था। आस्ट्रिया इस संघ का अध्यक्ष बना। इस परिसंघ में सभी राज्यों के प्रतिनिधि मिलकर एक डायट (सभा) बनाते थे। लेकिन इस डायट (सभा) में आस्ट्रिया अपना पूर्ण प्रभाव बनाए रखता था। आस्ट्रिया ने इस संघीय डायट को शक्तिहीन बनाए रखा।

जर्मनी के एकीकरण में प्रमुख बाधाएँ

1. आस्ट्रिया उस समय यूरोपीय राजनीति में एक शक्तिशाली देश था। जर्मन राज्यों के एकीकरण में आस्ट्रिया ही प्रमुख प्रतिक्रियावादी शक्ति था, वह निरन्तर अपना हस्तक्षेप जर्मनी में बनाए रखता था। आस्ट्रिया को भय था कि यदि जर्मन राष्ट्रवाद सफल हो गया तो बहुराष्ट्रीयता वाले उसके साम्राज्य को बिखरने में ज्यादा समय नहीं लगेगा।

2. जर्मनी के दक्षिणी राज्य (बवेरिया, बादेन, बुर्टेम्बर्ग इत्यादि) कैथोलिक मत के प्रभाव में थे। अतः इनमें होने वाली समस्त राष्ट्रवादी गतिविधियों के विपरीत पोप इन राज्यों पर नियन्त्रण बनाए रखता था। जर्मनी राज्यों के एकीकरण के प्रयास पर फ्रांस इन राज्यों में हस्तक्षेप कर सकता था ऐसी आशंका थी।

3. समस्त यूरोपीय राजनीति का केन्द्र फ्रांस की राजधानी पेरिस थी। फ्रांस किसी भी कीमत पर स्वयं की सीमा पर किसी और शक्तिशाली देश का उदय होते नहीं देख सकता था। अतः वह जर्मनी के एकीकरण का विरोधी था।

4. इग्लैण्ड भी फ्रांस की भांति जर्मन राज्यों में रूचि बनाए हुये था। उसने हनोवर प्रान्त के बहाने उत्तरी राज्यों में हस्तक्षेप कर रखा था।

5. जर्मनी का बौद्धिक वर्ग भी जर्मन एकता के प्रश्न पर भिन्न–भिन्न मत या विचार रखता था। कुछ राज्य जर्मनी का एकीकरण राजतंत्र के अधीन चाहते थे लेकिन वे लोग नेतृत्व के प्रश्न पर बंटे हुए थे। कुछ आस्ट्रिया के समर्थक थे तो कुछ प्रशा के समर्थक थे। दूसरी ओर जर्मनी में गणतंत्र समर्थक भी मौजूद थे।

6. जर्मनी में सामाजिक व आर्थिक विषमताएँ भी विद्यमान थी।

एकीकरण के साधक तत्व

1.जॉलवरीन – जर्मनी के राजनैतिक एकीकरण की शुरूआत से पूर्व उसके आर्थिक एकीकरण ने जो आधारशिला तैयार की उसने जर्मन लोगों में राष्ट्रीय एकता की भावना बलवती कर दी। प्रशा द्वारा 1818 ई. में भवार्जबर्ग – सोंदर शोसन नामक छोटे राज्यों से सीमा शुल्क संघ नामक संधि जॉलवरीन की । इन दोनों राज्यों के मध्य चुंगी समाप्त कर दी गई। माल की आवाजाही निर्बाध रूप से होने लगी। इसने व्यापार अत्यधिक वृद्धि कर दी। आर्थिक एकता ने उस प्रादेशिक व क्षेत्रीय प्रभाव को कम कर दिया जो जर्मनी के एकीकरण में बाधक था। राबर्ट इरगेंग के अनुसार "इसने क्षेत्रीय भावना को समाप्त कर साम्राज्यवादी नेतृत्व को मजबूती प्रदान की।" 1834 ई. तक लगभग सभी प्रमुख राज्य इस संघ के साथ हो गए। जर्मनी में रेलमार्गों के निर्माण ने इसमें और सहयोग प्रदान किया। सर फ्रेडरिक लिस्ट ने "आर्थिक एकता के लिए निशुल्क व्यापारिक मार्गों पर जोर दिया।"

केटलबी ने कहा कि "जॉलवरिन के निर्माण ने भविष्य में प्रशा के नेतृत्व में जर्मनी के एकीकरण का मार्ग प्रशस्त कर दिया।"

2.बौद्धिक आन्दोलन – किसी भी राष्ट्र के निर्माण में वहाँ के दार्शनिकों, इतिहासकारों, साहित्यकारों व कवियों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है। लिफ्टे, ईगल, डालमेन, हार्डेनबर्ग, हेंटिक हाइन इत्यादि दार्शनिकों ने जर्मन आन्दोलन को सर्वश्रेष्ठ होने की संज्ञा दी। जर्मन जाति में आर्य अर्थात् सर्वश्रेष्ठ मनुष्य की भावना भर दी।

फिक्टे ने जर्मनी में फ्रांस विरोधी विचारों को उचित दिशा देते हुए उसमें राष्ट्रीयता की भावना भर दी। जर्मनी के जेना विश्वविद्यालय में 1815 ई. बर्शेनशैफ्ट नामक देशभक्त संगठन का निर्माण किया गया। इस संगठन ने जर्मन देशवासियों के नैतिक उत्थान पर जोर दिया। इस संस्था ने देशवासियों में न्याय, स्वतंत्रता एवं एकता की भावना भर दी।

3.औद्योगिक प्रगति – औद्योगिक प्रगति के लिए आवश्यक कोयला और लोहा जर्मनी के हर क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में विद्यमान था। यही दोनों आज भी प्रत्येक उद्योग की आधारशिला माने जाते हैं। इन संसाधनों ने जर्मनी में औद्योगिक क्रांति की शुरूआत कर दी। परिवहन के लिए रेलमार्गों का निर्माण किया गया। प्रशा और भवानबर्गनर के मध्य जॉलवरीन की संधि में प्रशा को यूरोप के अग्रणी औद्योगिक नगरों में ला खड़ा किया। इस औद्योगिक प्रगति में उस व्यापारिक वर्ग को जन्म दिया जो अब जर्मनी के एकीकरण में ही स्वयं का लाभ देख रहा था। वे चाहते थे कि जर्मनी में व्यापार निर्बाध रूप से हो। जॉलवरीन के माध्यम से जो आर्थिक एकीकरण की शुरूआत हुई वह रेलमार्गों से माध्यम से शीघ्र ही जर्मनी के दूसरे छोटे–छोटे राज्यों में पहुँच गई। उधर आस्ट्रिया लगातार होने वाले युद्धों और पुराने व्यापारिक नियमों एकाधिकार और गिल्ड प्रथा के कारण आर्थिक संकट की ओर जा रहा था।

बिस्मार्क का योगदान

प्रशा का सम्राट विलियम प्रथम (1861 – 1888 ईस्वी) सुलझे विचारों का दृढ़ निश्चयी व्यक्ति था। उसमें व्यक्तियों को परखने की क्षमता थी। यद्यपि वह उदारवादी विचारों में विश्वास करता था लेकिन वह जानता था कि जर्मनी का एकीकरण राजतंत्र एवं उसके अधीन सुदृढ़ सेना के माध्यम से ही हो सकता है। इसी कारण उसने वानरून को युद्धमंत्री, वानमोल्टके को सेनापति एवं बिस्मार्क को प्रधानमंत्री नियुक्त किया। बिस्मार्क एक चतुर राजनीतिज्ञ, अन्तरराष्ट्रीय मामलों का जानकार तथा कूटनीतिक कुशलता से परिपूर्ण व्यक्तित्व का धनी व्यक्ति था।

चित्र–4.20 : बिस्मार्क

बिस्मार्क ने कहा कि "मै आपके साथ (विलियम प्रथम) ही नष्ट हो जाना स्वीकार करूँगा, किन्तु संसदीय सरकार के विरूद्ध संघर्ष में श्रीमान् का साथ कभी नहीं छोडूँगा।"

बिस्मार्क का मानना था कि 1848–1849 ईस्वी तक का जो समय राष्ट्रवादियों ने वाद विवाद में समाप्त कर दिया था वह उनकी भूल थी। उसका मानना था कि उस काल की बड़ी समस्याएँ भाषणों और बहुमत के प्रस्ताव द्वारा नहीं बल्कि रक्त और लौह की नीति से सुलझ सकती थी। बिस्मार्क ने इस कारण प्रशा को शक्तिशाली राज्य बनाने की ठानी। संसद के निचले सदन द्वारा सैन्य बजट अस्वीकार करने पर उच्च सदन से ही पारित करवा अपनी दृढ़ता का परिचय दिया। बिस्मार्क एक ओर तो आस्ट्रिया को, सेना के दम पर, जर्मन राज्यों से बाहर निकालना चाहता था। दूसरी ओर अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति का लाभ लेना चाहता था। इस दिशा में उसने अन्य देशों के साथ गुप्त संधियाँ, तथा कूटनीति के प्रयास आरम्भ कर दिए।

सम्पूर्ण जर्मनी के एकीकरण की घटनाओं को तीन संधियों के मध्य विभाजित किया जा सकता है :–

युद्ध	उद्देश्य	संधि
डेनमार्क से युद्ध (1864 ईस्वी)	आस्ट्रिया से युद्ध का आधार तैयार करना	गेस्टाइन संधि (14 अगस्त 1865 ईस्वी)
आस्ट्रिया से युद्ध (1866 ईस्वी) (सेडोवा का युद्ध)	जर्मन परिसंघ से आस्ट्रिया का निष्कासन	प्राग की संधि (23 अगस्त 1866 ईस्वी)
फ्रांस से युद्ध 1870 ईस्वी (सेडान का युद्ध)	दक्षिणी जर्मन राज्यों को उत्तरी जर्मन संघ से मिलाकर जर्मनी का एकीकरण पूर्ण करना।	फ्रेंकफर्ट की संधि (26 फरवरी 1871 ईस्वी)

1. गेस्टाइन संधि –

जर्मनी संघ की दो रियासतें भलेसविग और हाल्सटाइन पर डेनमार्क का अधिकार था। हाल्सटाइन की अधिकांश जनसंख्या जर्मन थी। साथ ही वह जर्मन संघ का सदस्य भी था। दूसरी ओर भलेसविग में जर्मन बहुमत में तो थे मगर डेन लोग भी वहाँ रहा करते थे। डेन लोग जर्मनी के एकीकरण के विरोधी थे। 1852 ई. की लन्दन संधि में डेनमार्क ने इन दोनो रियासतों को कभी भी अपने में विलय नहीं करने की बात स्वीकार कर ली थी। लेकिन 1863 ई. में डेनमार्क के शासक फ्रेडरिक ने इन दोनों रियासतों पर लंदन संधि के विरूद्ध अधिकार कर लिया।

इस प्रश्न पर प्रथम बार बिस्मार्क को राजनीतिक योग्यता और कूटनीतिक कुशलता दिखाने का अवसर मिला। बिस्मार्क इस अवसर का लाभ उठा आस्ट्रिया को जर्मनी से बाहर करके उसके नेतृत्व में जर्मन संघ को समाप्त करना चाहता था।

बिस्मार्क के प्रयास से इन दोनों रियासतों को लेकर जनवरी 1864 ई. में प्रशा व आस्ट्रिया में समझौता हुआ जिसमें दोनों रियासतों पर डेनमार्क के अधिकार को अस्वीकार कर उसे अंतिम चेतावनी देने का निश्चय किया गया। यह मैत्री बिस्मार्क की विजय थी। इसमें उसने आस्ट्रिया को साथ में तो ले लिया लेकिन दोनों रियासतों का भविष्य पारस्परिक समझौते द्वारा तय करने का निश्चय किया।

फरवरी 1864 ई. में आस्ट्रिया और प्रशा की संयुक्त सेना ने डेनमार्क को हरा दिया। इग्लैण्ड डेनमार्क की सहायता के लिए आगे नहीं आया, जिसका डेनमार्क को भरोसा था।

गेस्टाइन नामक स्थान पर 14 अगस्त 1865 ई. को विलियम प्रथम और आस्ट्रिया के सम्राट फ्रांसिस जोसेफ में समझौता हो गया। समझौते की प्रमुख शर्ते इस प्रकार थी –

1. इस समझौते में हाल्सटाइन आस्ट्रिया को और भलेसविग प्रशा को मिला।
2. लावेनबुर्ग की डची के एवज में आस्ट्रिया ने रुपए लेना स्वीकार कर लिया।
3. कील नामक बन्दरगाह पर जो सामरिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण था, किलेबन्दी करने का अधिकार प्रशा को मिला।

इस प्रकार इस समझौते में जर्मन परिसंघ को अलग होने का रास्ता दिखा दिया।

यह समझौता आस्ट्रिया की राजनीतिक भूल और बिस्मार्क की बड़ी कूटनीतिक विजय थी। हाल्सटाइन यद्यपि आस्ट्रिया को मिला लेकिन इसकी अधिकांश जनसंख्या जर्मन थी। वह जर्मन राज्यों के अधिक नजदीक था। वहाँ पर विद्रोह की भावना भड़कने के अधिक अवसर थे। बिस्मार्क का कहना था कि यह गेस्टाइन मात्र कागज द्वारा दरार ढकने जैसा दिखाई देता है। बिस्मार्क ने आस्ट्रिया के साथ हाल्सटाइन के आगामी प्रश्न पर युद्ध की पृष्ठभूमि तैयार कर दी।

2. प्राग की संधि – बिस्मार्क जानता था और चाहता था कि गेस्टाइन समझौता ही आस्ट्रिया से युद्ध का आधार बने। इसलिए उसने कूटनीति का परिचय देते हुए हाल्सटाइन रियासत आस्ट्रिया को दे दी थी।

बिस्मार्क ने एक ओर तो युद्ध की तैयारी आरम्भ कर दी दूसरी ओर कूटनीति के माध्यम से आस्ट्रिया को यूरोपियन राष्ट्रों से सहायता नहीं मिले इस योजना को अमल में लाने के प्रयास प्रारम्भ कर दिये। इस कार्य में उसे अन्तर्राष्ट्रीय अनुकूल वातावरण भी मिला। इग्लैण्ड यूरोपीय राष्ट्रों में हस्तक्षेप नहीं करने की नीति पर चल रहा था इसलिए आस्ट्रिया को उससे सहायता मिलने की आशा नहीं थी। दूसरी ओर पोलैण्ड के विद्रोह मे रूस की मदद कर बिस्मार्क ने जर्मनी के पक्ष में रूस की सहानुभूति प्राप्त कर ली थी। 1865 ई. में बियारिट्स में हुई बिस्मार्क एवं नेपोलियन तृतीय की मुलाकात में फ्रांस के तटस्थ होने का वादा बिस्मार्क ने ले लिया था, उसके बदले राइन प्रदेश के कुछ भाग फ्रांस को दिए जाने थे।

उधर इटली के एकीकरण में आस्ट्रिया भी बाधक बन रहा था। दुश्मन का दुश्मन मित्र की नीति पर काम करते हुए 1866 ई. में प्रशा और सार्डीनिया में समझौता हुआ। आस्ट्रिया के विरूद्ध युद्ध छेड़ने पर प्रशा सार्डीनिया को वेनेशिया दिलवा देगा ऐसा वचन दिया गया।

एक ओर हाल्सटाइन की जर्मन जनता आस्ट्रिया के विरूद्ध आन्दोलन कर रही थी, जिसे बिस्मार्क गुप्त रूप से समर्थन दे रहा था। दूसरी ओर आस्ट्रिया हाल्सटाइन में ड्यूक ऑफ आगस्टन वर्ग के पक्ष में चल रहे आन्दोलन को प्रोत्साहित कर रहा था।

इसी मुद्दे पर आस्ट्रिया व प्रशा में 3 जुलाई 1866 ईस्वी को सेडोवा या कोनीग्राज में निर्णायक युद्ध हुआ। आस्ट्रिया पराजित हुआ। प्रशा ने आस्ट्रिया जैसे देश को सात सप्ताह में ही पराजित कर दिया था। प्रशा सम्राट विलियम प्रथम तो आस्ट्रिया की राजधानी वियना पर अधिकार करना चाहता था मगर बिस्मार्क जानता था कि आस्ट्रिया युद्ध में पराजित जरूर हुआ है लेकिन शक्तिहीन नहीं। आगे चलकर आस्ट्रिया अपनी हार का बदला जरूर लेता इसलिए बिस्मार्क ने कहा था कि युद्ध का निर्णय हो गया है और अब आस्ट्रिया हमारा मित्र है। दोनों के मध्य 23 अगस्त 1866 ईस्वी को प्राग की संधि हुई जिसमें–

1. जर्मन परिसंघ समाप्त कर दिया गया।
2. हनोबर्ग, भलेसविग, हाल्सटाइन इत्यादि रियासतें प्रशा में शामिल हुई।
3. प्रशा के नेतृत्व में उत्तरी जर्मनी परिसंघ बनाया गया। उसमें आस्ट्रिया को शामिल नहीं किया गया।

प्रभाव –

इस युद्ध का सर्वाधिक प्रभाव फ्रांस पर पड़ा। यह कूटनीतिक मंच पर आस्ट्रिया की नहीं फ्रांस की हार थी। यूरोपीय रंगमंच पर नेपोलियन तृतीय के प्रभाव क्षेत्र में कमी आई।

चित्र–4.21 : तत्कालीन जर्मनी का मानचित्र

इस युद्ध ने आस्ट्रिया के प्रति सम्मान में कमी कर दी। बिस्मार्क की तलवार की नीति यूरोपीय राष्ट्रों के समक्ष भय के रूप में सामने आई, परिणामस्वरूप उदारवाद को धक्का लगा।

3.फ्रेको–प्रशियन युद्ध एवं फ्रेंकफर्ट की संधि –

सेडोवा के युद्ध में फ्रांस तटस्थ रहने पर भी राइन नदी तक का क्षेत्र जर्मनी से प्राप्त करने में असफल रहा था। इससे फ्रांस की अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा को ठेस पहुँची। पहले यूरोपीय राजनीति का केन्द्र फ्रांस था वह अब जर्मनी हो चुका था। उधर नेपोलियन तृतीय की देश में साख गिरती जा रही थी। नेपोलियन तृतीय ने हॉलैण्ड से लक्जमबर्ग खरीदने का प्रस्ताव रखा था। जर्मनी के राष्ट्रवादियों, समाचारपत्रों एवं राजनीतिज्ञों ने इसका तीव्र विरोध किया। इस विरोध के चलते हॉलैण्ड ने लक्जमबर्ग फ्रांस को देने से इन्कार कर दिया।

दूसरा तनावपूर्ण प्रश्न स्पेन की राजगद्दी को लेकर हुआ। स्पेन की गद्दी पर प्रशा के शासक के सम्बन्धी राजकुमार लियोपोल्ड को बैठाने का आमंत्रण मिला। इससे प्रशा के प्रतिष्ठा व अधिकार में वृद्धि होना स्वाभाविक था। दूसरी ओर फ्रांस में इस निर्णय का तीव्र विरोध हुआ। लियोपोल्ड को स्पेन की गद्दी मिलने से प्रशा की शक्ति बढ़ना तथा फ्रांस की सुरक्षा को भयंकर खतरा होना दिखाई दे रहा था। फ्रांस के राजदूत ने एम्स नामक स्थान पर सम्राट विलियम से मिलकर लियोपोल्ड को स्पेन के सिंहासन पर नहीं बैठने के लिए मना लिया। फ्रांसिसी राजदूत ने सम्राट विलियम से भविष्य में ऐसा नहीं करने के लिए ही वचन मांगा। इस बातचीत का लिखित विवरण तार द्वारा बिस्मार्क को मिल गया। बिस्मार्क ने कूटनीति का परिचय देते हुए उस पत्र को प्रकाशित करवा दिया। उसका वही प्रभाव हुआ जो वह चाहता था। फ्रांस व प्रशा दोनों ने इस पत्र को अपने–अपने अनुसार स्वयं का अपमान माना।

15 जुलाई 1870 ई. को फ्रांस व प्रशा के मध्य युद्ध प्रारम्भ हो गया। निर्णायक युद्ध सेडान में 1 सितम्बर 1870 ईस्वी को हुआ। इसमें प्रशा के सेनापति वानमोल्टके ने फ्रांसिसी सेना को पराजित किया। नेपोलियन तृतीय ने स्वयं 83000 सेना सहित आत्मसमर्पण कर दिया। 18 जनवरी 1871 ई. में वर्साय के महल में जर्मनी सम्राट विलियम का राज्याभिषेक किया गया। 26 फरवरी 1871 ईस्वी को फ्रेंकफर्ट की संधि हुई।

परिणाम

1. इस संधि ने जर्मनी का एकीकरण पूर्ण कर प्रशा के नेतृत्व में एक शक्तिशाली राष्ट्र का निर्माण किया।

2 युद्ध पश्चात् संधि में फ्रांस को अल्सास–लारेन जैसे औद्योगिक प्रदेश जर्मनी को सौंपने पड़े। फ्रांस के अल्लास – लारेन जैसे समृद्ध प्रदेश जर्मनी को मिलने से वहाँ भविष्य में तेजी से औद्योगिक प्रगति हुई। जिसके कारण इग्लैण्ड व जर्मनी में उपनिवेशों को लेकर होड़ शुरू हो गई।

3. संधि में हुए फ्रांस के अपमान ने प्रथम विश्व युद्ध की नींव रख दी। हेजन के अनुसार "1871 ईस्वी के पश्चात् फ्रेंकफर्ट संधि यूरोप का रिसने वाला फोड़ा बन गया।"

4. बिस्मार्क ने जिन गुप्त संधियों की शुरूआत जर्मनी के एकीकरण के लिए की वही अब यूरोप की राजनीति को बदलने जा रही थी। बिस्मार्क के रक्त–लौह की नीति ने उदारवाद पर घातक प्रहार किया। बिस्मार्क ने कुशल राजनीतिज्ञ व कूटनीति के पण्डित के रूप में विश्व में अपनी एक पहचान बना ली।

5. फ्रांस पर 20 करोड़ पौण्ड युद्ध का हर्जाना थोपा गया। यह भी तय हुआ कि जब तक हर्जाने की राशि नहीं चुका दी जाती जर्मन सैनिक उत्तरी फ्रांस में बने रहेंगे। यह फ्रांस का अपमान था।

6. इस युद्ध के कारण रोम पर इटली का अधिकार हो गया। जर्मनी के साथ ही इटली का एकीकरण भी पूर्ण हो गया।

इटली का राजनैतिक एकीकरण

नेपोलियन की विजय ने जिस प्रकार जर्मनी के एकीकरण की आधारशिला तैयार की उसी तरह का प्रभाव इटली के राज्यों पर भी पड़ा। इटली भी राजनैतिक एकीकरण हेतु अग्रसर हुआ। यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि नेपोलियन–विजय का प्रभाव इटली व जर्मनी एकीकरण पर जरूर पड़ा था लेकिन उसने विजय यात्रा इन राज्यों के एकीकरण को लेकर नहीं की थी। वह यहाँ गणतंत्र की स्थापना कर यूरोप की राजनीति में कोई विरोधी देश नहीं लाना चाहता था। यह तो विजययात्रा का एक स्वाभाविक परिणाम था।

फ्रांस की क्रांति एवं नेपोलियन की विजय ने वास्तव में राजनीति को आलीशान महलों से बाहर निकाल कर सड़कों पर चर्चा का विषय बना दिया था। रूढ़िवादी विचारों के समर्थकों (राजा, पादरी, कुलीन वर्ग) और प्रगतिशील लोगों में शक्ति संघर्ष तो पहले से ही चला आ रहा था। नेपोलियन ने उसमें शक्ति का संचार कर दिया।

नेपोलियन ने इटली के छोटे–छोटे राज्यों को जीत कर उन्हें तीन भागों में बांट दिया वहाँ गणतंत्र की स्थापना कर जनता को स्वयं की शक्ति की याद दिलाई थी। पूरे इटली में एक समान कानून व्यवस्था लागू कर दी गई। सामन्तवाद की समाप्ति और आन्तरिक व्यापारिक करों से मुक्ति ने आर्थिक एकीकरण की शुरूआत कर दी। फ्रांस की राज्य क्रांति ने इटली की रियासतों को समान अधिकार, मजहबी स्वतंत्रता, प्रेस की स्वाधीनता से परिचित करवा दिया था।

इटली के एकीकरण में प्रमुख बाधाएं

एकीकरण से पूर्व इटली नामक देश पहले कभी नहीं था। यहाँ अलग–अलग राज्यों में अलग–अलग व्यवस्थाएँ विद्यमान थी। आस्ट्रिया के चांसलर के अनुसार "इटली मात्र एक भौगोलिक अभिव्यक्ति थी।" इटली में सामाजिक व रूढ़ीवादी मान्यताएँ अभी भी मजबूती से अपने पैर जमाए हुए थी, अर्थात् वहाँ कुलीन व अभिजात वर्ग मजबूत था। सभी राज्यों की परम्पराएँ रीति–रिवाज भिन्न–भिन्न थे। एक दूसरे से मिलकर रहने की प्रवृत्ति का भी राज्यों में अभाव था। मेटरनिख ने ठीक ही कहा कि –''इटली में एक राज्य दूसरे राज्य के विरूद्ध, एक शहर दूसरे शहर तथा एक परिवार दूसरे परिवार के विरूद्ध था। यहाँ तक कि आदमी, आदमी के विरूद्ध था।''

मेजिनी के शब्दों में ''आठ राज्यों की भिन्न–भिन्न मुद्राएँ हमें एक–दूसरे से अलग करती हैं और परस्पर अजनबी बना देती हैं।''

जर्मनी के समान इटली के एकीकरण में आस्ट्रिया ही प्रमुख प्रतिक्रियावादी शक्ति था। इटली भौगोलिक दृष्टि से भी उत्तरी मध्य व दक्षिणी राज्यों में विभक्त था। उत्तरी राज्यों पर आस्ट्रिया का प्रभाव था। मध्य राज्य पोप के नियन्त्रण में थे तथा दक्षिणी राज्यों में बूर्बो वंश के शासकों का अधिकार था। यूरोप के कैथोलिक समर्थक देश भी पोप की सत्ता को समाप्त करने के विरोधी थे। इटली की राजधानी रोम पोप के सीधे नियन्त्रण में थी। इस पर अधिकार करना सम्पूर्ण कैथोलिक जगत को विरोधी बनाना था। इटली के राज्यों में जन जाग्रति का अभाव था।

इटली के एकीकरण के सम्बंध में वहाँ के राजनीतिज्ञों के मत भिन्न–भिन्न थे। कुछ गणतंत्र के समर्थक थे तो कुछ पोप के अधीन संघीय राज्य के समर्थक थे।

जर्मनी के विपरीत इटली में औद्योगिक क्रांति का सूत्रपात नहीं हुआ था, न ही वहाँ आधारभूत उद्योगों की सम्भावना थी, जिससे कि व्यापारिक और मध्यम वर्ग तथा जनता इटली के एकीकरण में अपना लाभ देखती।

चित्र–4.22 : तत्कालीन इटली का मानचित्र

इटली के एकीकरण में सहायक प्रमुख संगठन एवं व्यक्ति

1. कार्बोनरी – इस गुप्त संस्था की स्थापना 1810 ई. में नेपल्स में हुई थी। इस संस्था का मुख्य उद्देश्य विदेशियों को बाहर निकाल कर इटली में वैधानिक स्वतंत्रता की स्थापना करना था। वैसे इस संस्था के निश्चित उद्देश्य नहीं थे। प्रभावशाली नेतृत्व और निश्चित उद्देश्य के अभाव में यह संस्था विफल हो गई थी।

2. युवा इटली – यंग इटली की स्थापना मेजिनी द्वारा 1831 ई. में की गई थी। शीघ्र ही इस संस्था ने कार्बोनरी संस्था का स्थान ले लिया। मेजिनी इटली के युवकों पर विश्वास करता था। उसका कहना था कि यदि समाज में क्रांति लानी है तो नेतृत्व नवयुवकों के हाथ में दे दो उनके हृदय में असीम शक्ति छिपी होती है। इस संस्था के तीन नारे थे – परमात्मा में विश्वास रखो, सब भाइयों एक हो जाओ और इटली को स्वतन्त्र करो। मेजिनी को इटली के एकीकरण का मस्तिष्क व आध्यात्मिक भाक्ति माना जाता है। इस संस्था ने इटली के निवासियों में देश भक्ति, संघर्ष, त्याग, बलिदान और स्वतंत्रता की भावना भर दी। मेजिनी गणतंत्रीय विचारों और क्रांतिकारी साधनों का पोषक था।

मैजिनी ने इटली की जनता का आह्वान करते हुए कहा कि "संयुक्त इटली के आदर्श को छोड़कर अन्य किसी चीज के पीछे मत दौड़ो। इटली एक राष्ट्र है, एक राष्ट्र बनकर रहेगा।"

मैजिनी देशभक्तों की दृष्टि में देवदूत था जो इटली के भविष्य को निर्मित करने आया था।

3. काउण्ट कावूर (1810 –1861 ईस्वी) – कावूर का जन्म 1810 ईस्वी में ट्यूरिन (सार्डीनिया) के एक कुलीन परिवार में हुआ था। उसने सेना में इंजीनियर की नौकरी की थी। वह उदारवादी विचारों का समर्थक था। साथ ही इग्लैण्ड यात्रा के दौरान उसे संसदीय प्रणाली का अध्ययन करने का मौका मिला।

इटली के एकीकरण को वह पीडमाण्ट प्रान्त के सेवाय राजवंश के माध्यम से पूर्ण करना चाहता था। इसी दिशा में उसने अपने विचारों के प्रचार प्रसार के लिए "इल रिसर्जिमेण्टों" नामक समाचार–पत्र निकाला था। सन् 1852 ईस्वी में विक्टर इमेनुअल द्वारा उसे प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया। कावूर एक व्यवहारिक, कूटनीतिज्ञ, राजनीतिज्ञ एवं राजतंत्र समर्थक व्यक्ति था। वह इटली की शक्ति व सामर्थ्य से भली–भांति परिचित था। इसी कारण वह इटली के एकीकरण के प्रश्न का अन्तरराष्ट्रीय–करण करना चाहता था। कावूर की आन्तरिक नीति, सुधारों और विदेश नीति ने इटली का एकीकरण पूर्ण कर यूरोप पटल पर एक नया इतिहास व भूगोल बना दिया।

चित्र–4.23 : कावूर

कावूर द्वारा इटली के प्रान्तों में किये गये आन्तरिक सुधार :–

1. बंजर भूमि को कृषि योग्य भूमि में बदला एवं किसानों को ऋण के रूप में सहायता दी गई।

2. मुक्त व्यापार नीति के तहत पड़ौसी राज्यों से सन्धियाँ कर विकास को गति दी गई।

3. यातायात के साधनों का विकास कर व्यापार को बढ़ावा दिया। इस प्रकार लोगों को आपस में मिलने का मौका दे विचारों के आदान प्रदान का अवसर दिया।

4. चर्च पर नियन्त्रण के प्रयास किए गए।

5. सैनिक रणनीति के तहत सेना में सुधार कर सीमावर्ती क्षेत्रों में किलेबन्दी की गई।

6. बैंकों और सहकारी समितियों की स्थापना की गई।

इस प्रकार उसने पीण्डमांट जैसे छोटे राज्य को आदर्श राज्य के रूप में स्थापित कर दिया।

कावूर का योगदान

कावूर वह व्यक्ति था जिसके बिना मेजिनी का आदर्शवाद और गेरीबाल्डी की वीरता निरर्थक होती। कावूर जानता था कि बिना विदेशी सहायता के इटली कभी स्वतंत्र नहीं हो सकता। वह उदार राजतंत्र का समर्थक था। कावूर का मानना था कि –

1. पीण्डमांट सार्डिनिया ही इटली का एकीकरण करने में समर्थ है

2. आस्ट्रिया एकीकरण में सबसे बड़ा बाधक है।

3. विदेशी सहयोग के बिना आस्ट्रिया को इटली से बाहर नहीं किया जा सकता।

कावूर यथार्थवादी व्यवहारिक राजनीति में विश्वास करता था। वह इटली के प्रश्न का अन्तर्राष्ट्रीयकरण करना चाहता था, ताकि विदेशी शक्तियों की सक्रिय मदद एवं सहानुभूति हासिल की जा सके। उस समय यूरोपीय पटल पर इंग्लैण्ड और फ्रांस ही शक्तिशाली राष्ट्र थे। इंग्लैण्ड यूरोपीय देशो में हस्तक्षेप नहीं करने की नीति पर कार्य कर रहा था। उससे मदद की आशा नहीं थी।

फ्रांस की क्रांति और नेपोलियन की विजय का महत्त्वपूर्ण योगदान इटली के एकीकरण में रहा है। राष्ट्रीयता की भावना जो फ्रांस से बही उसी ने इटली को एक राष्ट्र के रूप में एकीकृत होने को प्रेरित किया।

फ्रांस का शासक इटली के एकीकरण के प्रश्न पर इटली से सहानुभूति रखता था। अतः कावूर इसी दिशा में आगे बढ़ना चाहता था। इसी दिशा में उसने क्रीमिया के युद्ध (1854 ईस्वी) में रूस के विरूद्ध इग्लैण्ड और फ्रांस की सेना को 18000 सैनिकों की मदद से उनकी सहानुभूति व मित्रता प्राप्त कर ली। यद्यपि इटली के उदारवादियों ने कावूर द्वारा की गई रूस विरूद्ध इस सैनिक सहायता का विरोध किया था। कावूर की इस सैनिक सहायता रुपी जुअे का लाभ युद्ध समाप्ति पश्चात् पेरिस सम्मेलन (1856 ईस्वी) में मिला। आस्ट्रिया के विरोध के बावजूद सार्डिनिया राज्य को पेरिस में आमंत्रित किया गया। कावूर ने इस सम्मेलन में इटली की दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति के लिए आस्ट्रिया को जिम्मेदार ठहराया। पेरिस सम्मेलन में कावूर ने इटली के प्रश्न पर नैतिक विजय प्राप्त कर ली।

प्लोम्बियर्स समझौता – सम्राट नेपोलियन और कावूर के मध्य सार्डिनिया के निकट प्लोम्बियर्स नामक स्थान पर समझौता हुआ।

1. सार्डिनिया और आस्ट्रिया में युद्ध होने पर फ्रांस 2 लाख सैनिकों की सहायता देगा।

2. फ्रांस की सहायता के बदले नीस व सेवाय के प्रदेश फ्रांस को मिलेंगे।

3. परमा, मोडेना और टस्कनी मिलकर एक नया राज्य बनेगा जिस पर नेपोलियन का भाई प्रिंस जरोम बोनापार्ट राजा बनेगा।

4. नेपल्स, सिसली और पोप के राज्य बने रहेंगे।

5.लोम्बार्डी और वेनेशिया सार्डिनिया को प्राप्त होंगे।

विक्टर इमेन्युअल ने अपनी पुत्री क्लेथिडे का विवाह जरोम नेपोलियन के साथ कर दिया।

इस समझौते के तुरन्त बाद पीण्डमान्ट के समाचार पत्रों ने जहर उगलना शुरू कर दिया। कावूर ने आस्ट्रिया को भड़काने हेतु मस्स व कर्रारा प्रान्तों में विद्रोह करवा दिया। आस्ट्रिया ने वैसी ही प्रतिक्रिया दी जैसी कावूर चाहता था। आस्ट्रिया ने 23 अप्रेल 1859 ईस्वी को तीन दिन का अल्टीमेटम दे दिया। कावूर ने खुशी में कहा कि "हम इतिहास बनाने जा रहे हैं।" 3 मई को फ्रांस ने भी इटली के पक्ष में युद्ध की घोषणा कर दी। युद्ध निर्णायक रहा। आस्ट्रिया की पराजय हुई।

विलाफ्रेंका की विराम संधि (11 जुलाई 1859 ईस्वी) – नेपोलियन तृतीय व आस्ट्रिया के सम्राट फ्रांसिस जोसेफ के मध्य हुई।

1. परमा, मेडोना और टस्कनी को पुनः स्वतंत्र राज्य बना दिया गया। 2. लोम्बार्डी सार्डिनिया को मिला। 3. वेनेशिया आस्ट्रिया को दे दिया गया। 4. पोप के अधीन इटली का संघ बनाया गया।

इस संधि से इटली के लोगों को निराशा हाथ लगी थी। वेनेशिया पर आस्ट्रिया का अधिकार बना रहना इटली के लिए घातक माना गया। इस संधि से कावूर भी अप्रसन्न था। उसने त्यागपत्र तक दे दिया। किन्तु पीण्डमान्ट शासक ने सन्तुलन बनाये रखा। इसका लाभ भी उसे मिला। विलाफ्रेंका की संधि की पुष्टि ज्यूरिख संधि से हो गई। इसी के साथ इटली के एकीकरण का प्रथम चरण पूर्ण हुआ।

मध्य इटली राज्यों में जनमत संग्रह

युद्ध के पश्चात् मध्य इटली के राज्यों ने परमा, मोडेना, टस्कनी, बोलोग्ना और रोमाग्ना में जनता ने विद्रोह कर दिया। वे इटली में समाहित होने को उत्सुक थे। इंग्लैण्ड की अहस्तक्षेप की नीति और इटली के प्रति सहानुभूति इन राज्यों को इटली में एकीकृत होने को प्रोत्साहित कर रही थी। यद्यपि आस्ट्रिया चाहता था कि ज्यूरिख संधि के तहत इन राज्यों में पुराने शासक पुनः स्थापित कर दिए जाएँ। कावूर ने मौके का फायदा उठाते हुए फ्रांस को नीस और सेवाय के प्रदेश देने का वादा करते हुए उसे अपनी ओर मिला लिया। मार्च 1860 ई. में मध्य इटली राज्यों में जनमत संग्रह कराया गया। इसमें परमा, मेडोना, टस्कनी, बोलोग्ना और वियोकेन्जा ने सार्डिनिया और नीस और सेवाय ने फ्रांस के साथ मिलने का मत दिया। नीस व सेवाय फ्रांस को मिलने से गैरीबाल्डी को आघात लगा। इग्लैण्ड की सहानुभूति इटली के साथ थी अतः मध्य इटली के राज्यों में जनमत संग्रह के प्रश्न पर इग्लैण्ड ने फ्रांस के साथ इटली का पक्ष लिया।

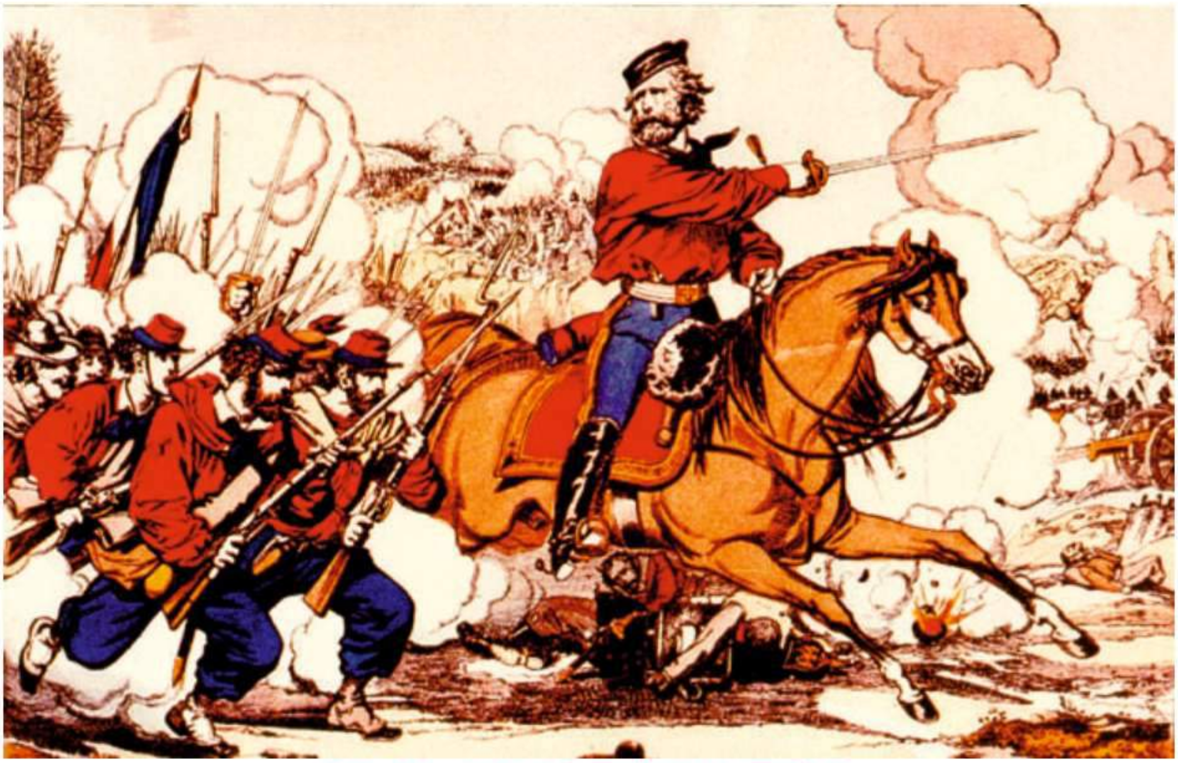

चित्र–4.24 : लाल कुर्ती आन्दोलन (दी थाउजैण्ड)

4. गैरीबाल्डी –

ज्यूसप गैरीबाल्डी का जन्म नीस नगर में 1807 ई. को हुआ। उसके पिता एक व्यापारिक जहाज में अधिकारी थे। इस कारण गैरीबाल्डी को भूमध्य सागर की यात्राओं का अनुभव हुआ। इन यात्राओं में वह इटली के राष्ट्रभक्तों के सम्पर्क में आया था। गैरीबाल्डी को एक नौसैनिक विद्रोह में भाग लेने पर मृत्यु दण्ड की सजा दी गई थी। लेकिन वह दक्षिणी अमेरिका चला गया। वहाँ उसने छापामार युद्ध का प्रशिक्षण लिया। 1854 ई. में पुनः इटली आने पर उसने केप्रीरा नामक टापू खरीदा। यह वही व्यक्ति था जिसके कारण नेपल्स व सिसली इटली में शामिल हुए थे। वह इटली की तलवार था। उसने ''लाल कुर्ती'' नामक देशभक्तों का एक संगठन बनाया एवं इसके दम पर ही वह सिसली में प्रवेश कर पाया था। गैरीबाल्डी के जीवन में महत्त्वपूर्ण घटना गणतंत्रवादी से राजसत्ता का समर्थक बनना था। दक्षिणी इटली के विलय के समय इग्लैण्ड ने गैरीबाल्डी के स्वयंसेवकों को युद्धपोत से नेपल्स व सिसली पहुंचाने में मदद की।

नेपल्स और सिसली का विद्रोह –

नेपल्स और सिसली में शासक विदेशी था साथ ही वह शासन करने के योग्य भी नहीं था। मैजिनी, फ्रांसिस क्रिस्पी और गैरीबाल्डी ने वहाँ विद्रोह की योजना बना उनका इटली में एकीकरण सफल कर दिया। गैरीबाल्डी ने लगभग 1000 लाल कुर्ती वाले स्वयंसेवकों का दल बना 5 मई 1860 ईस्वी को सिसली पर आक्रमण कर दिया। इंग्लैण्ड द्वारा उन्हें अप्रत्यक्ष रूप से मदद मिली। जनता पहले से ही बूर्बो राजवंश के विरूद्ध थी। गैरीबाल्डी ने विजय प्राप्त कर स्वयं को अधिनायक घोषित कर दिया। उधर कावूर को डर हो गया कि इस अपार सफलता के कारण कहीं गैरीबाल्डी कैथोलिक राज्य रोम पर आक्रमण नहीं कर दे। अन्यथा फ्रांस इटली के विरोध मे उतर जाएगा, जिससे युद्ध लड़ना मुश्किल हो जाता दूसरी ओर उसे गैरीबाल्डी द्वार राजतंत्र के विपरीत गणतंत्र घोषित करने की आशंका थी। कावूर ने कहा कि उसे इटली की विदेशियों, अनिष्टकारी सिद्धांतों तथा गणतंत्रवादी गैरीबाल्डी से रक्षा करनी है। अतः उसने विक्टर एमेनुअल और गैरीबाल्डी से मुलाकात कर नेपल्स और सिसली को इटली में समाहित करवाने की सहमती ले ली।

रोम और वेनेशिया –

1866 ई. में प्रशा और आस्ट्रिया के मध्य हुए सेडोवा के युद्ध में इटली ने आस्ट्रिया के विरूद्ध प्रशा को सैनिक सहायता देते हुए युद्ध की घोषणा कर दी। 3 जुलाई 1866 ई. को प्रशा ने आस्ट्रिया को पराजित कर दिया। अतः प्रशा और आस्ट्रिया के मध्य हुई प्राग की संधि में इटली को वेनेशिया दिलवा दिया गया।

5. रोम –

रोम में कैथोलिक पंथ सम्राट पोप का शासन था। साथ ही फ्रांस की सेवाएँ इसकी रक्षा के लिए सदैव तत्पर रहती थी। इस कारण रोम पर आक्रमण कर दूसरे कैथोलिक देशों को अपने विरूद्ध करना इटली के वश में नहीं था। इस पर अधिकार का सपना तब पूर्ण हुआ जब अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ फ्रांस के विपरीत साबित हुई। 1870 ई. में प्रशा और फ्रांस के मध्य युद्ध हुआ। इसमें फ्रांस को प्रशा के विरूद्ध सारी ताकत झोंकनी पड़ी। रोम से उसने सेना बुला ली। इसके बावजूद भी उसकी हार हुई। इस मौके का फायदा इटली ने उठाया और रोम पर अधिकार कर लिया। रोम में जनमत संग्रह करवाया गया जिसमें जनमत इटली के पक्ष में रहा। रोम को संयुक्त इटली की राजधानी बनाया गया। 12 जून 1871 ई. को विक्टर इमेन्युअल द्वारा संयुक्त इटली की संसद का उद्घाटन किया गया।

"लॉ ऑफ पेपल गारण्टीज" (Law of Papal guarantees) इटली की संसद द्वारा एक कानून पारित कर दिया गया जिसमें पोप के निवास स्थान के आस–पास के क्षेत्र पर पोप की स्वतंत्र सत्ता स्वीकार कर ली गई। अब पोप भी राजदूत नियुक्त कर सकता था उसे एक शासक की स्थिति प्रदान की गई।

मूल्यांकन

जर्मनी व इटली के एकीकरण ने केवल इतिहास ही नहीं रचा बल्कि यूरोप का राजनैतिक मानचित्र भी बदल दिया। वह एक युगान्तरकारी घटना थी। यूरोप की राजनीति का जो केन्द्र पेरिस था उसको चुनौती देने के लिये अब जर्मनी तैयार था।

फ्रांस व ऑस्ट्रिया की बनाई गई व्यवस्थाएँ यूरोप में भंग हो चुकी थी तथा अब शेष विश्व में ऐसा होने जा रहा था।

बिस्मार्क की रक्त व लौह की नीति ने यूरोप में भाांति व्यवस्था को चोट पहुँचा सैन्यवाद को सर्वोच्च शिखर पर बैठा दिया। बिस्मार्क द्वारा जर्मनी के लोगों में भरी गई जर्मनवाद व सैन्यवाद की भावना ही प्रथम व द्वितीय विश्वयुद्ध का आधार बनी।

बिस्मार्क के कार्य व उद्देश्यों को लेकर इतिहासकारों में भिन्न–भिन्न मत हैं। कुछ उसकी नीतियों को पूर्व नियोजित मानते हैं जैसा डेनमार्क, आस्ट्रिया व फ्रांस के साथ युद्धों की समीक्षा करने पर ज्ञात होता है। जबकि शेष इतिहासकार बिस्मार्क को अवसरवादी मानते हैं जिसने यूरोप तत्कालीन परिस्थितियों का लाभ उठाया व इस सम्बन्ध में स्पेन के उत्तराधिकार के प्रश्न पर घटित घटनाओं का उदाहरण देते हैं जिन पर बिस्मार्क का कोई नियंत्रण नहीं था।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि जर्मनी के एकीकरण के उद्देश्य व योजनाएँ तो पूर्व नियोजित थी साथ ही बिस्मार्क ने यूरोप की राजनीति में उपजी विशिष्ट परिस्थितियों का लाभ उठा उन अवसरों का उचित उपयोग किया। कावूर के विपरीत जर्मनी के एकीकरण के लिए बिस्मार्क के पास न तो मेंजिनी था और न ही गैरीबाल्डी। साथ ही उसे अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर अन्य किसी देश की सहानुभूति भी प्राप्त नहीं थी। उसे ऑस्ट्रिया व फ्रांस जैसे शक्तिशाली राष्ट्र से युद्ध लड़ना पड़ा। बिस्मार्क ने जर्मनी के एकीकरण में साहस, शौर्य, दृढ़ निश्चय का परिचय दिया और अपने लक्ष्य को प्राप्त किया।

जर्मनी के एकीकरण में बिस्मार्क के योगदान के विपरीत इटली में मेंजिनी, गैरीबाल्डी, कावूर एवं विक्टर इमेन्युअल का संयुक्त योगदान रहा। प्रशा जैसे शक्तिशाली राज्य ने जिस प्रकार जर्मनी के एकीकरण में मुख्य भूमिका निभाई थी उसके विपरीत इटली के एकीकरण के रथ का सारथी एक पीण्डमाड जैसा छोटा सा राज्य था। कुछ विद्वानों द्वारा तो इटली के एकीकरण को "ईश्वर का आशीर्वाद" कह कर भी संबोधित किया जाता है। क्योंकि इटली की जनता भाताब्दियों से अलग–अलग रहने व सोचने की आदी थी। साथ ही उनमें एकता व स्वतंत्रता के प्रति उस स्तर की भावना भी नहीं थी कि इटली का एकीकरण हो ही जाए। इटली का एकीकरण कावूर के राजनीतिक कौशल व कूटनीति के चारों ओर ही घूमता है।

अभ्यास प्रश्न

अतिलघुत्तरात्मक प्रश्न

1. उत्तरी अमेरिका महाद्वीप के मूल निवासियों की प्राचीन सभ्यताएँ कौन – कौन सी थी?
2. अमेरिका स्वतंत्रता संघर्ष दिवस किस दिनांक को मनाया जाता है?
3. रूसो द्वारा लिखित पुस्तक का नाम बताइए?
4. एस्टेट्स जनरल से क्या तात्पर्य है?
5. पार्लेमा क्या थी?
6. "टेनिस कोर्ट की भापथ" से क्या अभिप्राय है?
7. कोंकोर्दा की संधि किस–किस के मध्य व कब हुई थी?
8. "आर्डर इन कॉन्सिल" से क्या तात्पर्य है?
9. भारतीय विद्वानों की दृष्टि में आदर्श राष्ट्र के

आवश्यक तत्व बताइए?

10. जर्मनी के राजनैतिक एकीकरण में चरणबद्ध प्रमुख संधियाँ कौन–कौन सी थी?

11. युवा इटली का निर्माण कब व किसने किया था?

12. रक्त और तलवार की नीति से क्या तात्पर्य है?

लघुत्तरात्मक प्रश्न

1. महाद्वीपीय व्यवस्था से क्या तात्पर्य है?

2. जर्मनी के राजनैतिक एकीकरण में जॉलवरीन नामक संघ किस प्रकार सहायक सिद्ध हुआ?

3. धर्म की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए?

4. "मैं ही क्रांति हूँ" "मैंने क्रांति का अन्त किया है" नेपोलियन द्वारा कहे गये ये कथन कितने सार्थक एवं सत्य हैं?

5. फ्रांस की क्रांति के समय घटित प्रमुख गणतंत्रवादी राजनैतिक दलों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए?

6. अमेरिकी स्वतंत्रता संग्राम के सम्बंध में अपने विचार व्यक्त कीजिए?

7. अमेरिकी मूल निवासियों की प्रमुख सभ्यता एजटेक का वर्णन कीजिए?

8. यूरोपवासियों के अमेरिका पहुँचने से पहले अमेरिकी मूल निवासियों पर क्या प्रभाव पड़ा?

9. नेपोलियन को दूसरा ''जस्टीवियन'' क्यों कहा जाता है?

10. इटली के एकीकरण में सहायक प्रमुख संगठनों का वर्णन कीजिए?

11. "लाल कुर्ती दल" से क्या तात्पर्य है?

12. किन–किन कारणों से प्रेरित होकर अमेरिकी उपनिवेशवादी लोग मातृदेश इग्लैण्ड के विरूद्ध संघर्ष हेतु एक हुए? संक्षिप्त वर्णन कीजिए?

दीर्घउत्तरात्मक प्रश्न

1. इटली के एकीकरण में कावूर के योगदान को विस्तारपूर्वक समझाइए?

2. राष्ट्र के सम्बन्ध में भारत की अवधारणा यूरोपीय अवधारणा से किस प्रकार व किन–किन बिन्दुओं पर भिन्न है, स्पष्ट कीजिए?

3. फ्रांसिसी क्रांति का कारण स्पष्ट करते हुए इसके विश्व पर पड़े प्रभाव को स्पष्ट कीजिए?

4. अमेरिकी संघर्ष अथवा स्वतंत्रता का विश्व पर क्या प्रभाव पड़ा?

5. यूरोपीय महाद्वीप के देश अन्य देशों के समुद्री मार्गो की खोज के लिए क्यों निकले थे? विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।

6. जर्मनी के एकीकरण में बिस्मार्क के योगदान का विस्तारपूर्वक वर्णन कीजिए।